चन्दामामा
मई १९८२

Innocence and impatience
prompt the youth
to attain false hights...
Only experience and
realisation can bring
true happiness.
श्रीमान
श्रीमती
Director :VIJAYA REDDY
Story :K. S. RAO
Dialogue :RAJ BALDEV RAJ
Lyrics :MAJROOH SULTANPURI
Music :RAJESH ROSHAN
Camera :
P. L. RAI
Art :
S. KRISHNA RAO
Editing :
K. BALU
Associate Director :
VIJAYAKUMAR RAICHURA
Stills :
R. NAGARAJA RAO
Production Controller :
M. VEERA RAGHAVULU
बी. नागी रेड्डी
प्रस्तुत करते हैं,
एक नयी महान
फिल्म
EASTMANCOLOR by PRASAD/VIJAYA COLOR LAB
Frame to Frame a Family Film
विजय प्रॉडक्शन्स - चित्र
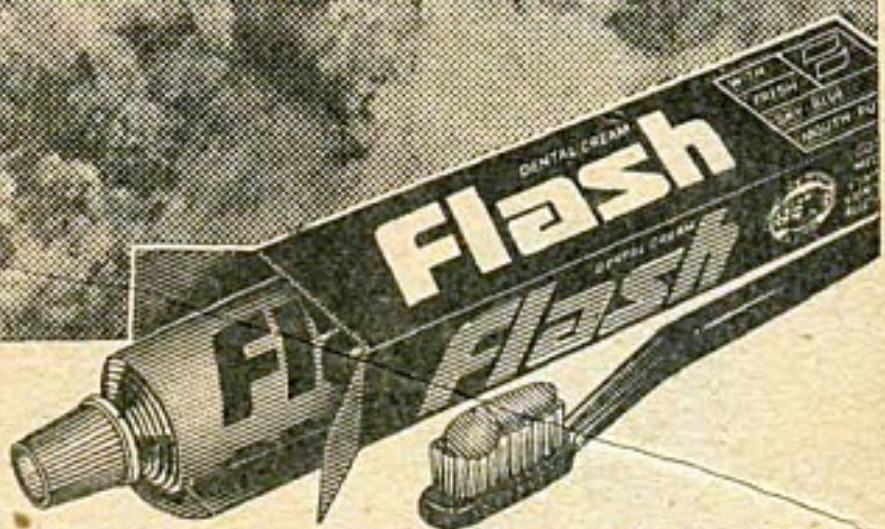
चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'

संचालक : नागिरेड्डी

"हर्जाना" नामक कहानी हमें यह बताती है कि समाज के अन्दर दुश्मनी रखनेवाले आपस में एक दूसरे को नुकसान पहुँचाना चाहे तो वह अन्य लोगों के लिए भी हानिकारक बन जाता है।

अमर वाणी

ललितांतानि गीतानि, कुवाक्यांतं तु सौहृदम् ।

प्रणामांतः सतां क्रोधः, याचनांतं हि गौरवम् ।।

[जब तक गीत कर्ण मधुर होता है, तभी तक उस का महत्व है। जब तक कठिन वचन नहीं बोलते, तभी तक मित्रता बनी रहती है। उत्तम व्यक्तियों का क्रोध एक बार प्रणाम करने मात्र से शांत हो जाता है, मनुष्य का तब तक आदर होता है जब तक वह किसी से याचना नहीं करता।

वर्ष: ३४ मई १९८२ अंक: ९

एक प्रति: १-७५ : : वार्षिक चन्दा: २१-००

गलत फ़हमी

अपने सह कर्मचारी सूरजभान के आग्रह पर लक्ष्मीचन्द हेमा को देखने गया, लक्ष्मीचन्द ने इसके पूर्व ही हेमा के बारे में सुन रखा था। उस के माँ-बाप नहीं हैं; सिर्फ़ एक भाई है, हेमा घर के काम-काजों में बड़ी निपुण है।

लक्ष्मीचन्द जिस दिन हेमा को देखने गया, उस दिन हेमा का भाई पड़ोसी गाँव में गया था। इसलिए हेमा की भाभी ने उसे सजा कर लक्ष्मीचन्द वगैरह के सामने बिठाया। हेमा सहज ही सुंदर युवती है।

थोड़ी देर तक बातचीत चलती रही, आखिर सूरजभान ने मुस्कुराते हुए पूछा—"लक्ष्मीचन्द, तुम तो लड़की को देख चुके हो, तुम्हारी क्या राय है? मेरे ख्याल से हेमा सब तरह से योग्य कन्या है, अगर कोई कमी है तो यह कि दहेज़ कुछ हाथ नहीं लगेगा।"

लक्ष्मीचन्द ने कहा—"ऐसी कई चीज़ें हैं जिन्हें हम धन देकर भी खरीद नहीं सकते। साथ ही मैं इस बात पर भी यक़ीन नहीं करता कि धन देकर हम जो चीज़ें खरीदते हैं, उनके द्वारा हमें निश्चय ही सुख प्राप्त होगा। इसलिए तुम दहेज़ की बात मत उठाओ।"

"तो इसका मतलब है कि तुम्हें हेमा पसंद आ गई है। उफ़, इस वक़्त हेमा के पिता रामाचार्य होते तो कैसे खुश हुए होते।" सूरजभान ने कहा।

रामाचार्य का नाम सुनते ही लक्ष्मीचन्द चौंक पड़ा और पूछा—"रामाचार्य! वे क्या करते थे? किस गाँव के थे?"

"वे बड़े ही मशहूर वैद्य थे। उनके निजी गाँव पार्वतीपुर में ही नहीं बल्कि आस पास के गाँवों में भी बहुत प्रसिद्ध थे।" सूरजभान ने बताया।

नरेश उपाध्याय

ये बातें सुनने पर हसन का चेहरा पीला पड़ गया। वह जोर से चीख़ कर धम्म से नीचे गिर पड़ा। उसकी हालत पर कद्दूस को रहम आ गई। जब हसन होश में आया, तब कद्दूस उसके कंधे पर हाथ रख कर थप-थपाते बोला–"तुम को मैं इस हालत में छोड देना नहीं चाहता। सोचेंगे, शायद कोई रास्ता निकल आवे। क्या तुम मेरे साथ चलने को तैयार हो?"

हसन को लगा कि फिर से उस की जान में जान आ गई हो। वह ख़ुशी के मारे एक दम उछल पड़ा और कद्दूस के पीछे चल पड़ा। दोनों सफ़ेद हाथी पर सवार हो गये। कद्दूस ने हाथी के कान में कुछ कहा। दूसरे ही पल में हाथी हवा में उड़ा, वायुवेग के साथ चल कर नीले पहाड़ पर उतर गया। नीले पहाड़ में एक गुफा थी। उस के नीले रंग के इस्फात के दर्वाजे थे। कद्दूस ने जब दर्वाजे पर दस्तक दिया, तब नीले रंग का एक नीग्रो नीले रंग की तलवार और ढाल ले आया। बूढे ने पलक मारने की देरी में नीग्रो के हाथ से तलवार और ढाल खींच कर दूर फेंक दिया। तब नीग्रो एक तरफ़ हट गया। जब वे दोनों गुफा में पहुँचे, तब नीग्रे ने फिर से दर्वाजा बंद किया।

गुफा से होकर एक मील चलने पर उन्हें दो द्वार दिखाई दिये। दोनों में सोने के किवाड़ लगे थे। अब्दुल कद्दूस एक द्वार के किवाड़ ढकेल कर भीतर चला गया। उस की आज्ञा के मुताबिक़ हसन बाहर ही रह गया।

घंटे भर बाद कद्दूस एक घोड़े को साथ लेकर बाहर निकला। घोड़ा और उस के अयाल भी नीले रंग के थे। कद्दूस ने हसन को घोड़े पर सवार होने का हुक्म दिया, फिर दूसरा द्वार खोला। उस द्वार के उस पार नीला आसमान फैला हुआ था।

"बेटा, तुम आखिरी बार फिर सोच-समझ कर अपना निर्णय कर लो। रास्ते में तुम्हें भयंकर खतरों का सामना करना पड़ेगा। क्या तुम उनका सामना करने को

तैयार हो? या तुम अपनी दीदियों के पास लौटना चाहोगे?" कद्दूस ने हसन से पूछा।

"मैं एक हज़ार मौतों का भी सामना करने केलिए तैयार हूँ, मगर पीछे मुड़ना नहीं चाहता।" हसन ने अपना निर्णय सुनाया।

"क्या तुम अपना जन्म देने वाली माँ के वास्ते भी वापस लौटना नहीं चाहोगे?" कद्दूस ने पूछा।

"मैं अपनी बीबी और बच्चों को साथ लिये बिना अपनी मां के पास लौटना नहीं चाहता।" हसन ने स्पष्ट कहा।

"अच्छी बात है। हसन, तुम यह चिटठी ले लो। घोड़ा रास्ता जानता है। उसे तुम्हें चलाने की ज़रूरत नहीं। वह तुम्हें काले पहाड़ पर उतार देगा। काली गुफा के पास उतर कर तुम घोड़े को गुफा के अंदर जाने दो। तब एक बूढा आदमी गुफा के भीतर से बाहर आएगा। वह देखने में एक दम काला होगा। उन के घुटनों तक बढ़ी सफ़ेद दाढ़ी होगी। उनको सलाम करके उनके हाथ यह चिटठी दे दो। वे पक्षियों के राजा हैं और मेरे अधिकारी हैं। उन की मदद के बिना तुम्हारे काम का सफल होना असंभव है। तुम उनकी मेहर्बानी का पात्र बनो।" यों समझा कर अब्दुल कद्दूस गुफा के अंदर चला गया। नीला घोड़ा जोर से हिन-हिनाकर आसमान में उड़ चला।

अब्दुल कद्दूस से प्राप्त नीले घोड़े पर सवार हो हसन ने लगाम ढीली कर दी। घोड़ा तीर की भांति तेजी के साथ उड़ते दस दिनों में दस साल का सफ़र समाप्त कर काले पर्वतों की पंक्ति पर पहुँचा। वह पंक्ति पूरब और पश्चिम की दिशा में फैली हुई थी।

नीला घोड़ा ऊंची आवाज में हिनहिनाते ज्यों ही काली पर्वत पंक्ति पर उतरा, त्यों ही हजारों की तादाद में काले घोड़े आकर नीले घोड़े के चारों तरफ़ फैल गये। नीला घोड़ा उनके बीच से होकर आगे बढ़ा और एक काली गुफा के पास पहुँचा। गुफा के बाहर हसन को उतार कर वह घोड़ा

तो सवेरे जाकर देख लूंगा।" भीतरी कमरे से जवाब मिला।

दूसरे ही पल में खिड़की के किवाड़ बंद हो गये। मेरा खून खौल उठा। फिर भी मुझ से कुछ करते बनता न था। इसलिए घर लौट कर मैं ने सारी बातें पार्वती को बताई और कहा—"रामाचार्य वैद्य नहीं, वह एक हत्यारा है। हम लालचन्द को इसी वक़्त शहर में ले जायेंगे। कहीं किराये की गाड़ी मिल सकती है?"

पार्वती बगल वाली गली में से एक जान-पहचान के गाड़ी वाले को बुला लाई। हम दोनों ने लालचन्द को बड़ी सावधानी से गाड़ी पर बिटाया। मगर शहर के जाने वाले रास्ते में ही लालचन्द मर गया।

सारा समाचार सुनकर सूरजभान ने कहा—"हेमा के घर पर तुमने जैसा व्यवहार किया, उसे मैं गलत नहीं मानता।"

दूसरे दिन शाम को पार्वती के घर के दर्वाजे पर किसी ने दस्तक दिया। मैं ने दर्वाजा खोला। सामने ड्योढी पर खड़ी हेमा को देख मैं चकित रह गया। मैं ने गुस्से में आकर पूछा—"ओह, तुम हो?, यहाँ पर आयी क्यों?"

"शादी करने की मांग लेकर नहीं आई हूं।" ये शब्द कहते हेमा भीतर आ गई। मैं हेमा की ओर क्रोध भरी नज़र डाले

हुए था, पर वह जरा भी विचलित हुए बिना कहे जा रही थी—"सूरजभान ने मुझे सारी बातें बताई हैं। आप सवेरा होने के पहले ही शहर में चले गये। इसलिए आप को पता नहीं है कि इस गाँव में कैसा अनर्थ हो गया था! आप ने मेरे पिताजी पर दोषारोपण किया है। दर असल बात यों है:

उस दिन रात को मेरा भाई हमारे रिश्तेदारों के घर शादी में गया था। मेरे पिताजी किसी मरीज़ को देखने पड़ोसी गाँव में गये थे। मैं रसोई बना कर अपने पिताजी के इंतजार में बैठी थी। मेरे पिताजी किराये की गाड़ी में आधी रात के क़रीब घर लौटे। घर में क़दम रखते ही बोले—"बेटी, सुनते

है कि गाड़ी वाले दोनों सगे भाई हैं। वे भूखे हैं। तुमने जो रसोई बनाई, वह इन्हें खिला दो। हम फिर खाना पका सकते हैं।"

मैंने दालान वाले कमरे में पत्तलों में गाड़ी वालों को खाना परोस दिया। वे खाना खाकर कुएं के पास हाथ-मुंह धोकर लौटे। इस के बाद छुरी दिखा कर हमें डराया और मुझे तथा मेरे पिताजी को खाट के पायों से बांध दिया। तब हमारे मुंह में कपड़े ठूंस कर सारी क़ीमती चीजों की गठरी बांधने लगे।

उसी वक़्त मेरे पिताजी का नाम लेकर कोई दर्वाजे पर दस्तक देने लगे। दोनों चोर घबरा गये। उनमें से एक ने खिड़की के किवाड़ खोल कर भांप लिया कि जो आदमी मेरे पिताजी की खोज में आया है वह उन्हें नहीं जानता। इस पर उसने मेरे भाई के जैसे अभिनय किया।

लालचन्द की हालत के बिगड़ने की बात सुनते ही मेरे पिताजी सारी ताक़त बटोर कर उठने को हुए। इस पर चोरों ने उन पर छुरी चलाई और सारा माल लेकर भाग गये। उस घटना को देखते ही मैं बेहोश हो गई। होश में आने पर मैं ने देखा कि पिताजी की अंत्येष्टि की तैयारियाँ हो रही हैं।"

हेमा के मुंह से सारा वृत्तांत सुन कर मैं आश्चर्य चकित था, हेमा ने आगे की कहानी समाप्त की-"आपके दोस्त के वास्ते अपने प्राण त्यागने वाले मेरे पिताजी आपकी दृष्टि में अत्याचारी और हत्यारे हैं। हम जो कुछ सुनते व देखते हैं, सब को सच मानना नहीं चाहिए। चोर तो दूसरे दिन पकड़े गये। वे अब क़ैद में सड़ रहे हैं।"

रामाचार्य के त्याग पर मेरी आँखें गीली हो गईं। मैं ने हेमा से कहा-"हेमा, तुम्हारे कहे मुताबिक़ हम जो कुछ सुनते व देखते हैं, सब सच नहीं होते। लेकिन तुम्हारे गले में मेरे द्वारा मंगल सूत्र बांधते हुए सब लोग जरूर देखेंगे। पर इस में असत्य की कोई बात न रहेगी।"

मेरे मुंह से यह आश्वासन पाकर हेमा संतुष्टिपूर्वक मुस्कुरा उठी और लज्जा के मारे उसने सर झुका लिया।

[६]

[शिवदत्त की सलाह के अनुसार समरसेन ने स्वयं सेनापति बनने को मान लिया और नरवाहन को सेना इकट्ठा करने भेजा। पर वह जनता और सेना के द्वारा मार खाकर लौट आया। लाचार होकर मृगशाला के अधिकारी ने खूंख्वार जानवरों को कटघरों से बाहर छोड़ दिया।]

शिवदत्त के मुंह से सारा वृत्तांत सुनकर मंदरदेव मंदहास करते बोला–"शहर की चहारदीवारी के बाहर डेरा डाले हुए दुश्मन और शहर की विद्रोही जनता भी सिर्फ़ राजा को गद्दी से उतार देना चाहती है। बस, यही है न? ऐसी हालत में इसके बाद अगर कोई भी राज्य पर क़ब्ज़ा करे, उसका नतीजा एक ही है न?"

"हाँ, हाँ, तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है!" यों कहते शिवदत्त ने सर हिलाया। उस वक़्त समरसेन को इस बारे में बारीकी के साथ सोचने का मौक़ा नहीं मिला। हालत बड़ी खराब थी। इसीलिए मैंने कहा–"जी हाँ, समरसेन! इस वक़्त यही उचित मालूम होता है! मेरे ख़्याल से राज्य को दुश्मन के हाथों में सौंपने के बजाय राजा को गद्दी से उतारकर

जनता की मदद से दुश्मन को दबाना कहीं उत्तम है ।"

"मैं भी यही सोचता हूँ । चित्रसेन तो बूढ़े हो चुके हैं । उनके कोई वारिस भी नहीं है । मैं समझता हूँ कि वे गद्दी को त्यागने के लिए ख़ुशी के साथ मान लेंगे । जनता शांत हो जाएगी तो शहर की चहार दीवारी के बाहर रहनेवाले दुश्मन को हराना कोई बड़ी बात नहीं है ।" समरसेन ने कहा ।

हम लोग इस बात पर गंभीरता पूर्वक विचार कर ही रहे थे, उसी वक़्त चित्रसेन वहाँ पर आ पहुँचे । उनको देखते ही जनता एक स्वर में नारे लगाने लगी– "राजा का अंत हो । राजत्व का नाश हो ।"

चित्रसेन हमारे पास पहुँच कर बोले– "समरसेन, मैंने क़िले के बुर्ज पर खड़े हो कर देखा, क़िले के बाहर डेरे डाले हम पर हमला करने के लिए तैयार बैठे दुश्मन के असंख्य सैनिक मुझे दिखाई दिये । साथ ही मैं शहर की जनता के क्रोध से भी अपरिचित नहीं हूँ । जो राजा अपने मनोरंजन और दावतों में डूबे जनता के कल्याण की बात बिलकुल भूल जाता है, वह गद्दी पर बैठने योग्य नहीं होता । मैं जनता की माँग के मुताबिक़ गद्दी को त्यागने के लिए ही नहीं, बल्कि उससे भी कहीं बड़ा त्याग करने के लिए तैयार हो गया हूँ ।" यों, कहते वे मण्डप पर पहुँचे ।

राजा चित्रसेन के मुँह से ये बातें सुनकर मैं और समरसेन-दोनों अवाक् रह गये। राजा ने जनता को संबोधित कर हाथ हिलाते हुए कहा—"कुंडलिनी द्वीप के निवासियो, मैंने आप लोगों के क्रोध और न्यायपूर्ण अनुरोध को समझ लिया है। भोग विलासों में डूबे रहकर मैं आप लोगों की तक़लीफ़ों को समझ न सका। इसलिए मुझे गद्दी से उतरने की आप लोगों की माँग उचित ही है। मैं अपने मुकुट को ही नहीं, बल्कि उससे भी बड़ी क़ीमती चीज़ को त्यागने जा रहा हूँ, पर मैं आप लोगों से यही अनुरोध करता हूँ कि आप सब अपने नेता समरसेन के आदेशों का पालन करें।"

दूसरे ही पल में जनता की जयकारों से आकाश गूँज उठा। मगर उसी वक़्त अचानक चित्रसेन मण्डप पर से नीचे कूद पड़े। यह सब पलक मारने के अंदर हो गया। मैं और समरसेन ने चकित हो नीचे की ओर देखा। तब [illegible] क चित्रसेन के प्राण-पखेरू शायद उड़ [illegible] ये थे। वे अचेत पड़े थे।

अचानक अपने बीच गिरने वाले प्राणी का पता न लगने [illegible] वजह से सारे ख़ूंख्वार जानवर भयकं[illegible] हो तितर-बितर हो गये। जनता उस दृश्य को देख निश्चेष्ट रह गई।

"सब कुछ समाप्त हो गया।" ये शब्द कहते समरसेन वहाँ के खंभे से सटकर
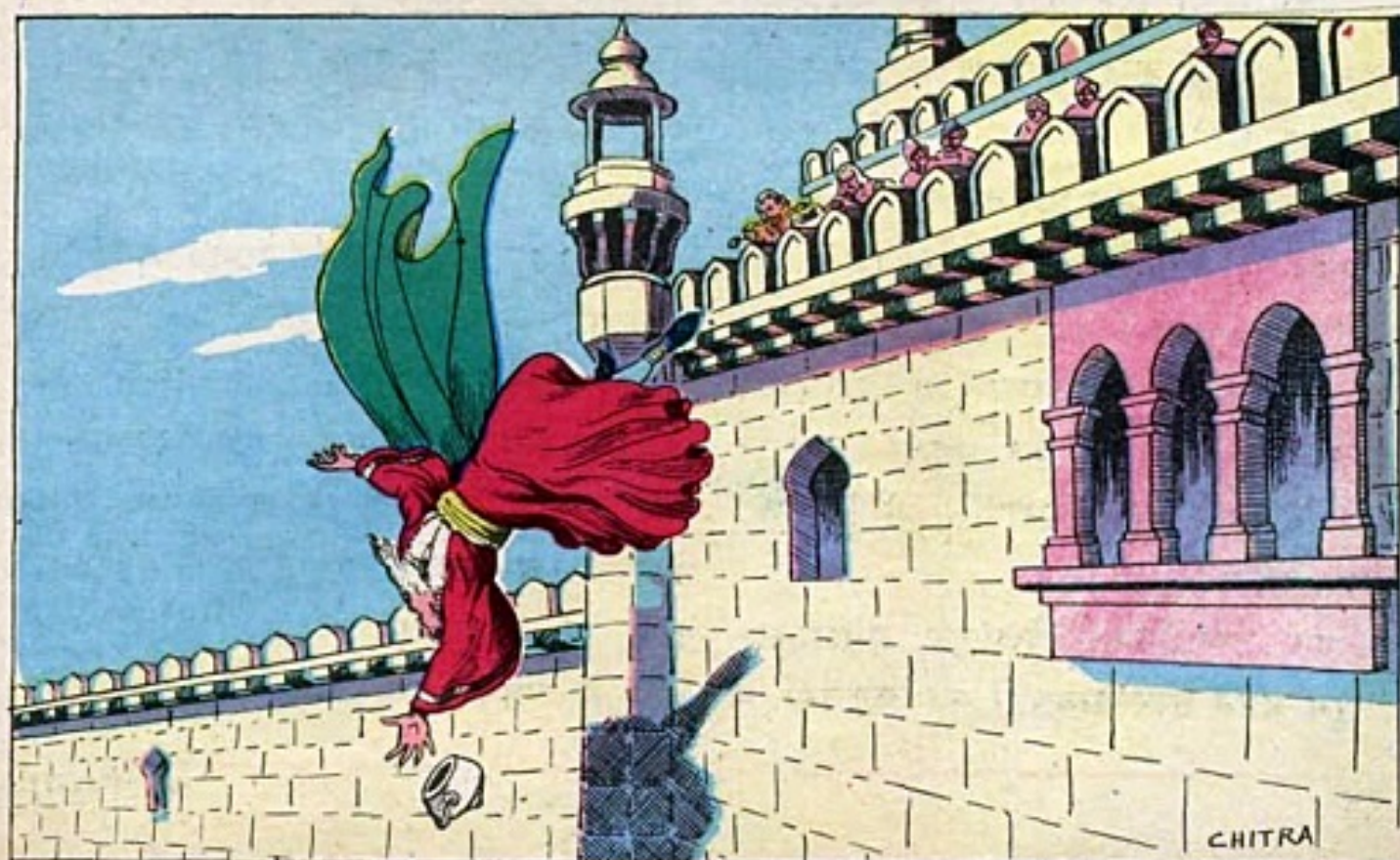
नीचे लुढ़क पड़े । उनकी आँखों से आंसुओं की धारा बह चली ।

मैंने जनता की ओर नज़र दौड़ाकर देखा । चारों ओर नीरवता छा गई थी । अचानक घटी इस दुर्घटना ने सारी जनता को एक दम स्तंभित कर डाला । समरसेन जड़वत रह गये । नरवाहन मिश्र भी जड़वत्-सा लगा ।

उसी समय मृगशाला का अधिपति दौड़ते हुए वहां पर आ पहुँचा । हांफते हुए बोला–"महा सेनापति जी! अब... अब...हम..."

मैंने उसे निकट बुलाकर समझाया–"तुम अपने सारे जानवरों को कटघरों में भिजवा दो! यह काम जल्दी हो जाना चाहिए! मैं थोड़ी देर में क़िले का द्वार खुलवाने जा रहा हूँ। इस बीच तुम महाराजा की भौतिक काया को यहां से हटा कर किसी सुरक्षित प्रदेश में पहुँचा दो ।"

समरसेन मेरी बातें ध्यान से सुन रहे थे, लेकिन थोड़ी दूर पर खड़ा नरवाहन मेरी तरफ़ तीक्ष्ण दृष्टि डालकर मण्डप के ऊपर चला गया ।

चन्द मिनटों में सारे खूँख्वार जानवर कटघरों के अन्दर हांक दिये गये । उसी समय राजा चित्रसेन का शव राज महल के आंगन से हटाया गया । मैं और समरसेन महल की सीढ़ियां उतर कर क़िले के द्वार की ओर चल पड़े ।

हम लोग द्वार के पास पहुँचे ही थे कि जनता में कोलाहल छा गया । सब लोग एक स्वर में नारे लगाने लगे–"समरसेन की जय! महा सेनापति समरसेन की जय ।" उन नारों से जमीन और आसमान प्रतिध्वनित हो उठे । इसके बाद क़िले का दर्वाजा खोला गया । समरसेन एक-दो क़दम आगे बढ़ा कर उच्च स्वर में बोले–"कुंडलिनी द्वीप के निवासियो, अब तक जो कुछ हुआ है, उसके बारे में मैं कुछ कहना नहीं

चाहता। यह बात सच है कि देश में अराजकता फैल गई है। इस वक़्त हमें इस बात की छान-बीन नहीं करनी है कि इसके जिम्मेवार कौन है? आज राजा चित्रसेन नहीं रहें, इसलिए राज भक्ति का कोई सवाल ही नहीं उठता। इस वक़्त जरूरत है देशभक्ति और एकता की भावना की।"

समरसेन के मुँह से ये शब्द सुनते ही जनता चिल्ला उठी—"कुंडलिनी द्वीप जिंदाबाद!"

"शहर की चहार दीवारी के बाहर दुश्मन हमारे नगर पर हमला करने के लिए डेरा डाले हुए है। इसलिए सब से पहले हमारा कर्तव्य यह होना चाहिए कि हम अपने नगर की रक्षा करें, तब देश की रक्षा! में आप लोगों से अनुरोध करना चाहता हूँ कि जो भी अस्त्र-शस्त्र चलाना जानते हैं, वे सब आगे आकर हथियार ले ले।" समरसेन ने कहा।

जनता में कोलाहल मच गया। सब लोग एक साथ एक दूसरे को ढकेलते आगे आये और चिल्लाने लगे—"मुझे तलावार दीजिए! मुझे परसु दीजिए! मुझे तीर और कमान दीजिए...।

समरसेन ने पीछे मुड़कर देखा। समीप में खड़े नरवाहन मिश्र पर उनकी दृष्टि

पड़ी। उससे बोले—"नरवाहन, मैं समझता हूँ कि इस बार तुम्हारा काम बहुत ही सरल होगा। तुम जल्दी जाकर फौज को तैयार करो!"

इसके बाद मैं और समरसेन वहाँ से क़िले के बुर्ज पर पहुँचे। दूर पर कूकुर मुत्तों की भांति दुश्मन के असंख्य खेमे दिखाई दिये। चींटियों की क़तारों जैसे सैनिक उन खेमों के आगे कवायद कर रहे थे। "शिवदत्त, हमारा दुश्मन युद्धतंत्र की व्यूह रचना न जानने वाला निरे बुद्ध नहीं है। उनकी कवायद देखने पर लगता है कि वे सभी सैनिक सुशिक्षित हैं!" समरसेन ने कहा।

समरसेन की बातों में सचाई थी। मैंने क़िले की दीवार से सटे कंदक की ओर देखा। उसमें थोड़ा सा ही पानी बच रहा था। तुरंत मैंने एक सैनिक को बुलाकर कंदक को पानी से भरने का हुक्म दे दिया। उस वक़्त समरसेन मेरी ओर मुड़कर बोले—"शिवदत्त, मुझे सेना का संचालन जरूर करना होगा। पर क़िले की हिफ़ाजत की जिम्मेदारी में तुम्हें सौंप देना चाहता हूँ। तुम्हारा क्या विचार है?"

मैं तत्काल उनके सवाल का कोई जवाब न दे पाया। क़िले की रक्षा की जिम्मेदारी लेने का मतलब है कि दुश्मन पर हमला करने जानेवाले सैनिकों के साथ में नहीं रह सकूँगा। ऐसी हालत में उप सेनापति के रूप में समरसेन के साथ जाने का मौक़ा नरवाहन मिश्र को मिल जाएगा। अगर मैं समरसेन के साथ लड़ाई में भाग ले सकूँगा तो वक़्त पर उनकी मदद कर सकूँगा; यही बातें मैं सोच ही रहा था कि इस उलझन से कैसे बचूँ, तभी नरवाहन मिश्र वहाँ आ पहुँचा।

समरसेन ने नरवाहन की ओर प्रश्नार्थक दृष्टि दौड़ाई। तब उसने कहा—"महा सेनापति जी, मैंने दो हज़ार सुशिक्षित सैनिकों का संगठन किया है। जनता में से चार हज़ार बलिष्ट युवकों को चुनकर उन्हें हथियार दे दिये हैं। आज्ञा दीजिए, आगे का मेरा कर्तव्य क्या है?" नरवाहन ने पूछा।

समरसेन ने मेरी तरफ़ मुड़कर कहा—"मेरा ख्याल है कि शहर की रक्षा के लिए दो हज़ार सैनिक काफी हैं! इस संबंध में तुम्हारी क्या राय है?" मैंने सिर्फ़ सर हिला कर स्वीकृति दी। इस पर वे फिर बोले—"अच्छी बात है; क़िले की रक्षा की जिम्मेदारी तुम्हारी है, मैं दो हजार हथियार बंद युवकों के साथ दुश्मन पर हमला करने जा रहा हूँ। दुर्ग से हमारे बाहर निकलते ही तुम

बड़ी सावधानी के साथ शहर के दर्वाजे बंद करवा दो।"

जब सारी सेना शहर के दर्वाजों से होकर बाहर चली गई, तब मैं अपने पच्चीस अनुचरों के साथ शहर की रक्षा के कार्यक्रमों के पर्यवेक्षण में लग गया। आयुधधारी युवकों का विन्यास देखने पर मुझे लगा कि उन्हें उन हथियारों के धारण करने का तरीक़ा तक मालूम नहीं है।

करीने से उन सब को एक स्थान पर खड़ा करना भी हमारे लिए मुश्किल हो गया। तिस पर वे लोग आपस में नाहक़ छोटी-छोटी बातों पर झगड़ा करते छोटे-छोटे दलों में बंटने लगे। इसका खास कारण उनमें अनुशासन का अभाव था जो सेना के लिए अत्यंत आवश्यक है। मैं शहर के दर्वाजे बंद करवा कर क़िले के बुर्ज पर चला गया। समरसेन के कुछ खास सैनिक जब क़िले से बाहर निकले, तब दुश्मन के शिविरों में थोड़ी हलचल मच गई। वे लोग जल्दबाजी में हथियारों से लैस हो क़तार बांधकर लड़ाई की तैयारी करने लगे। घुड़सवार सैनिक भाले धारण कर पैदल सेना के आगे आकर खड़े हो गये। कुछ लोग छोटे-छोटे दलों में बंटकर समरसेन की सेना पर चारों तरफ़ से आक्रमण करने निकल पड़े।

मैंने सोचा कि दो बड़ी सेनाओं के बीच अगर युद्ध छिड़ जाता तो उसका नतीजा शीघ्र निकलनेवाला नहीं है। मगर यहाँ की हालत कुछ और थी। रह-रहकर दुश्मन के दस-बारह सैनिक अचानक समरसेन के सैनिकों पर चढ़ाई कर देते और तुरंत दूर भाग जाते। इन अचानक हमलों की कल्पना समरसेन ने न की थी, वे दुश्मन के युद्ध तंत्र को समझ गये। उसका लोहा लेने के लिए उसीके तरीके को अपनाना अच्छा समझा और अपनी सेना को दस-दस की संख्या में कई टुकड़ों में बांटने लगे। (और है)

पाप का भय

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा; तब शव में स्थित बेताल ने कहा–" राजन, मेरा संदेह है कि आप एक पुण्यात्मा के रूप में यश पाने के ख्याल से शायद ये सारी मुसीबतें तो नहीं उठा रहे हैं? पर सच्ची बात यह है कि बड़े-बड़े पुण्यात्माओं के लिए भी ईश्वर की इच्छा का पता लगाना मुमकिन नहीं है। इस वजह ऐसे लोग पुण्य कार्य समझ कर कभी कभी पाप कार्य करने का साहस कर बैठते हैं। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को नित्यानंद नामक एक परोपकारी की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: नित्यानंद बचपन से ही परोपकारी वृत्ति रखने वाला

व्यक्ति था। जो लोग मुसीबतों में फंसे रहते हैं, उनकी खोज-खबर करके उनकी मदद किया करता था। दूसरों की मदद करने के ख्याल से ही वह व्यापार करते हुए धन कमाता था। यह सोचकर उसने शादी तक नहीं की कि परिवार उसके दान-कार्य में बाधा पहुँचा सकता है। दान करते समय भी नित्यानंद इस बात पर विचार करता था कि वह व्यक्ति दान पाने योग्य है या नहीं।

नित्यानंद के पड़ोसी गाँव में जयराम नामक एक महाजन निवास करता था। जनता के बीच यह बात फैल गई कि जयराम के यहाँ से जो भी क़र्ज लेता है, वह तबाह हो जाता है। क़र्ज वसूलने में जयराम न्याय और अन्याय की बात बिलकुल सोचता न था।

जयराम के दिन थोड़े समय के लिए मजे से कट गये, मगर धीरे-धीरे उसके भी बुरे दिन शुरू हुए। एक दिन डाकुओं ने उसका घर लूटने के साथ उसे जला भी दिया। जयराम के व्यवहार से गाँव का कोई भी व्यक्ति खुश न था, इसलिए किसी ने भी उसकी मदद नहीं की। इस तरह अमीर जयराम कंगाल बन बैठा।

आखिर जयराम अपने इस फटे हाल को लेकर उस गाँव में रह न पाया। लाचार होकर वह अपनी बीबी और बच्चों के साथ दूसरे गाँव के में शरण लेने चल पड़ा।

उस गाँव में परिवार के सभी लोग कड़ी मेहनत करके धन कमाने लगे। उसका ख्याल था कि इस तरह थोड़ा-बहुत धन जोड़कर फिर से कोई व्यापार शुरू करे! मगर बदक़िस्मती की वजह से वह थोड़ा भी धन जोड़ न पाया। जो कुछ वह कमाता, सब महंगाई और बीमारियों के पीछे खर्च होता गया।

जयराम अकसर यह सोचकर दुखी हो जाता कि किसी शनीचर ने उसे ग्रस लिया है।

एक दिन उस गाँव में एक साधू आया। जयराम ने साधू के आश्रम में जाकर अपनी विपदा सुनाई।

साधू ने समझाया—"तुमने कई दफे गरीबों के पेट काटे। इसके बदले में तुम एक साथ एक हज़ार गरीबों को खाना खिलाओ। इससे तुम्हारे पाप धुल जायेंगे। इसके बाद तुम ईमादार बनकर जिओ।"

उस दिन से जयराम बड़ी सावधानी के साथ धन जोड़ने लगा। फिर भी अचानक कोई न कोई खर्च आ पड़ता और हाथ खाली हो जाता। आखिर वह निराश हो सोचने लगा कि उसे अब उसके पापों से छुटकारा नहीं मिलेगा। उसी हालत में जयराम को नित्यानंद के बारे में समाचार मिला।

जयराम अपनी बीवी-बच्चों के साथ नित्यानंद के दर्शन करने चल पड़ा। गाँव की सीमा पर एक आदमी से जयराम की मुलाक़ात हुई। उससे जयराम ने नित्यानंद का समाचार पूछा।

उसने कहा—"मेरा ख्याल है कि नित्यानंद ज़रूर तुम्हारी मदद करेंगे। लेकिन मैं तुम्हें तत्काल तुम्हारी समस्या को हल करने का एक उपाय बता देता हूँ। सुनो, नित्यानंद बड़े ही पुण्यात्मा हैं, जब वे प्रति दिन मंदिर में क़दम रखते हैं, तब मंदिर के दीप अपने आप जल उठते हैं। अगर तुम उस महानुभाव को आतिथ्य दोगे

तो तुम्हें एक हज़ार गरीबों को खाना खिलाने का पुण्य मिलेगा ।"

जयराम गाँव में जाकर नित्यानंद से मिला और अपने आने का समाचार सुनाया ।

इस पर नित्यानंद ने उसे समझाया– "तुम्हारी मदद करने में मुझे किसी तरह की आपत्ति नहीं है, लेकिन यह बताओ, मैं अकेले तुम्हारे यहाँ खाना खाऊँगा तो वह एक हज़ार आदमियों के खाना खाने के बराबर कैसे होगा? मैं एक साधारण मानव हूँ! किसी ने शायद तुम्हें गलत सलाह दी है, इसलिए तुम ऐसे अंध विश्वास न रखो ।"
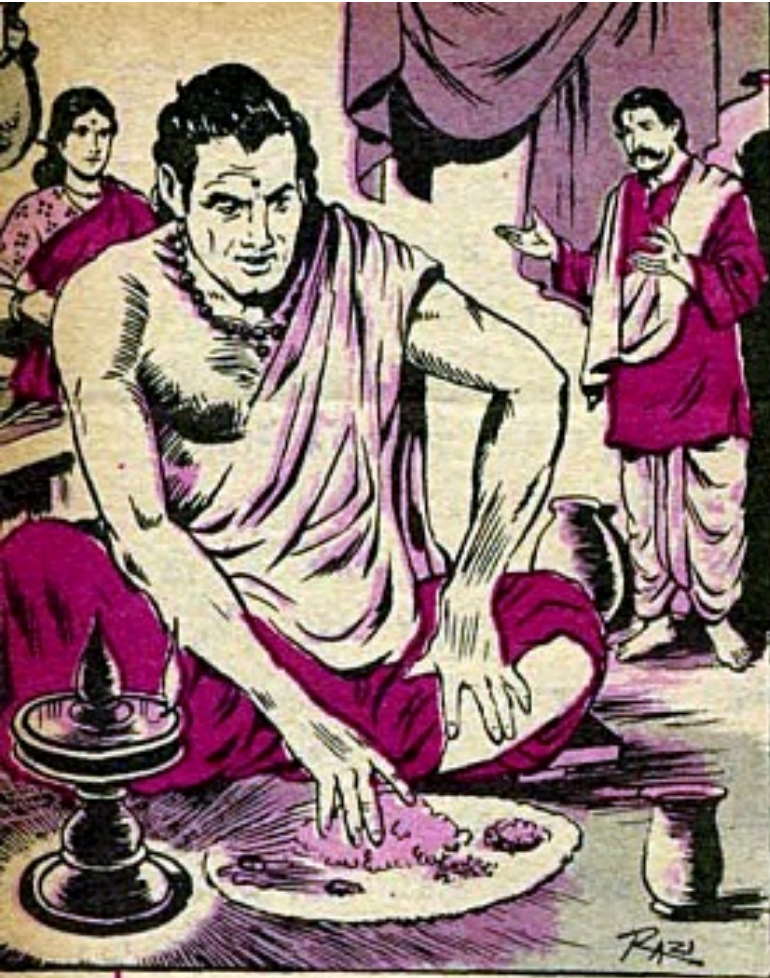
"आप बड़े पुण्यात्मा हैं, इसके उदाहरण के रूप में जब आप मंदिर में क़दम रखते हैं, तब दीप अपने आप जल उठते हैं । इसी तरह इस कार्य के लिए भी कोई न कोई सबूत मिल जाएगा ।" जयराम ने जवाब दिया ।

इसके बाद जयराम का परिवार चार दिन तक उस गाँव में कड़ी मेहनत करके थोड़ा-बहुत धन जोड़ पाया । उसी रक़म से नित्यानंद को बढ़िया दावत दी । नित्यानंद के भोजन करने के बाद एक विचित्र घटना घटी । जयराम की पत्नी ने ज्योंही नित्यानंद का झूठा पत्तल उठाया, त्योंही वहाँ पर दूसरा पत्तल प्रत्यक्ष हुआ । इस तरह एक के बाद एक कुल एक हज़ार पत्तल निकले ।

यह उदाहरण नित्यानंद के लिए भी एक अचरज की बात बन गई । इस पर वह पूर्ण रूप से संतुष्ट होकर वहाँ से अपने निवास को चला गया ।

जयराम ने यह सोच कर संतोष की सांस ली कि आज से उसकी सारी तक़लीफ़ें दूर हो गईं ।

उस दिन शाम को एक और अनोखी घटना घटी । नित्यानंद रोज की तरह मंदिर पहुँचा, मगर आश्चर्य की बात यह थी कि उस दिन मंदिर में दीप नहीं जले ।

यह बात भी गाँव वालों के लिए आश्चर्य की थी। नित्यानंद यह सोचकर घबरा गया कि उसके द्वारा न मालूम कैसी भूल हो गई है।

उस दिन से नित्यानंद के मंदिर में पहूँच जाने पर दीप जलते न थे। गाँव के लोगों ने भी सोचा कि नित्यानंद ने जो कुछ पुण्य जोड़ लिया था, वह सब खो बैठा है! लेकिन नित्यानंद ने भांप लिया कि जब से उसने जयराम की मदद की, तब से ऐसा हो रहा है।

एक दिन नित्यानंद अपने घर में भगवान की मूर्ति के सामने बैठकर पूछ बैठा–"भगवान, मुझ से कैसी गलती हो गई है? मैं आज तक भले व बुरे लोगों की बराबर मदद पहुँचाता आ रहा हूँ। जयराम की बाबत मैंने कैसी गलती की है! उसने थोड़े समय तक पाप जरूर किये, मगर अब उसने अपनी भूल समझ ली है! क्या उसकी मदद करना मेरी भूल थी?"

पर भगवान के मुँह से नित्यानंद को कोई जवाब नहीं मिला। इस पर उसने बड़ी लगन के साथ मूर्ति के सामने बैठे रहकर अपना निश्चय बताया–"भगवान, जब तक आप मेरी गलती नहीं बतायेंगे, तब तक मैं अन्न-जल त्याग कर यहीं पर बैठा रहूँगा।"

यह समाचार मिलते ही गाँव के बुज़ुर्गों ने जयराम को बुलवा कर इसका कारण पूछा। जयराम ने सारी कहानी सुनाई। उसी दिन गाँव के बुज़ुर्गों ने निश्चय कर लिया कि एक हज़ार गरीब लोगों को खाना खिलाना है। इस पर जयराम ने उन लोगों से बिनती की–"इस वक़्त आप लोग जो एक हज़ार लोगों को खाना खिलाना चाहते हैं, उसका पूरा खर्च मेरा होगा! लेकिन फिलहाल मेरे हाथ खाली हैं और मैं भी एक गरीब हूँ। मगर मैं मेहनत करके धीरे-धीरे आप लोगों का

क़र्ज चुकाऊँगा। मेहर्बानी करके मेरी बात मान लीजिए।"

बुजुर्गों ने जयराम की बात मान ली। इसके बाद एक हज़ार गरीब लोगों को खाना खिलाया गया। उस दिन शाम को नित्यानंद जब मंदिर में पहुँचा, तब मंदिर के दीप फिर अपने आप जल उठे। थोड़े दिनों में जयराम की हालत भी सुधर गई। वह ईमानदारी के साथ व्यापार करते हुए अपने दिन सुखपूर्वक बिताने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुना कर कहा– "राजन, नित्यानंद तो बड़ा ही पुण्यात्मा है, कई महिमाएँ भी रखता है। ऐसा व्यक्ति सिर्फ़ एक जून जयराम के घर पर खाना खाकर अपनी सारी महिमाएँ कैसे खो बैठा? क्या इसलिए कि जयराम के सारे पापों का भागीदार नित्यानंद बना? यदि ऐसा न हो तो इसके पीछे और कारण भी हैं? मेरे इस संदेह का समाधान आप जानते हुए भी न देंगे तो आप का सर फट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों जवाब दिया– "इस दुनिया के पुण्यात्माओं का पुण्य कैसा महान है, इसे जनता जान ले, इस वास्ते भगवान पुण्यात्माओं को कुछ अद्भुत शक्तियाँ देते हैं। इस कारण से उन पुण्यात्माओं को आदर्श बनाकर कुछ और लोगों के द्वारा पुण्य कार्य करने का रास्ता खुल जाता है! नित्यानंद ने जयराम की मदद करने की बात सोची, इसमें उसका कोई दोष नहीं है। मगर असली बात यह है कि जयराम मेहनत करके जो धन कमायेगा, उसीके द्वारा उसने एक हज़ार लोगों को एक जून खाना खिलाने का संकल्प किया, लेकिन नित्यानंद की वजह से वे लोग एक जून खाना पाने से वंचित रह गये। इसी पाप की वजह से नित्यानंद के मंदिर में पहुँचने पर दीप अपने आप नहीं जले। इससे उसे अपनी गलती मालूम हो गई।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो फिर से पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

हर्जाना

शाजीपुर नामक गाँव में ज्ञानचन्द और शोभाचन्द नामक दो किसान थे। गांव के पूरब में ज्ञानचन्द का आम का बगीचा था। पश्चिम में शोभाचन्द का। उन दोनों किसानों के बीच कई दिनों से दुश्मनी चली आ रही थी।

गरमी के मौसम में जब आम के बागों में मंजरियाँ लगीं, तब ज्ञानचन्द के मन में कुबुद्धि पैदा हो गई। वह शहर जाकर एक बंदर को खरीद लाया और रात के वक़्त शोभाचन्द के बाग में छोड़ दिया। बंदर बाग में स्वेच्छापूर्वक उछल-कूद करते अमिये बरबाद करने लगा।

शोभाचन्द ने बंदर को पकड़वाने के लिए गाँव के बहेलिये को दस रुपये का मेहनताना देने की लालच दिखाई। उसने जाल बिछाया, कटखरा रखा, मगर बंदर को फंसा नहीं पाया, आखिर उसने जवाब दिया—"हुजूर, आप अनुमति दे तो मैं बंदर को तीर चला कर मार सकता हूँ।"

"बंदर को मारना बड़ा पाप है। ज्ञानचन्द ने ही इस बंदर को मेरी बगिया में छोड़ रखा है। मेरी बगिया किसी भी हालत में बरबाद होती जा रही है, मैं उसकी बगिया को सर्वनाश करके छोड़ूंगा।" गुस्से में आकर शोभाचन्द ने कहा।

दूसरे दिन शोभाचन्द शहर में गया। एक बंदर को खरीद लाकर ज्ञानचन्द के बाग में छोड़ दिया। बंदर ज्ञानचन्द के बाग को तहस-नहस करने लगा। इस पर उसने भी बंदर को पकड़वाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन कोई फ़ायदा न रहा।

एक ओर आम से लदे अपने अपने बागों के तहस-नहस होते देखकर भी ज्ञानचन्द और शोभाचन्द उन्हें बचाने से दूर उल्टे वे और अपने जान-पहचान के लोगों से अपने अपने

इंदिरा पाठक

बंदरों के करतबों की तारीफ़ सुनाने लगे। इस प्रकार बंदरों की करनी का समाचार सारे गाँव में फैल गया।

चार-पांच हफ़्ते बीत गये। इस बीच दोनों बंदरों ने ज्ञानचन्द और शोभाचन्द के बाग सर्वनाश कर डाले, साथ ही गाँव के और लोगों के बगीचों में जा पहुँचे। उन लोगों ने बंदरों को पकड़वाने की कोशिश की, लेकिन कामयाब न हुए। आखिर सबने जाकर गाँव के मुखिये से ज्ञानचन्द और शोभाचन्द की करनी की शिकायत की।

मुखिये ने दोनों को बुलवा कर डांटा, तब उन्हें सजा सुनाते हुए बोला—"तुम दोनों की दुश्मनी की वजह से गाँव के सारे आम के बाग बरबाद होते जा रहे हैं। तुम्हारे बंदरों की वजह से जिन लोगों के बगीचे बरबाद हो गये हैं, उन्हें तुम लोगों को उसका हर्जाना देना होगा।"

इस पर ज्ञानचंद और शोभाचंद ने मुखिये से निवेदन किया कि बंदरों की वजह से उन्हें कितना नुकसान पहुँचा है और उन्हें पकड़ने के पीछे जो कोशिशें की गईं वे कैसे नाकामयाब हो गईं।

मुखिये ने उनकी बातों को सच मानते हुए सर हिलाया। तब अपना फ़ैसला सुनाया—"तुम दोनों जान-बूझकर एक दूसरे को नुक़सान पहुँचाने के ख़्याल से ये बंदर पकड़ लाये। इसलिए उन बंदरों की वजह से जिन किसानों को नुक़सान पहुँचा है, उन्हें तुम्हें हर्जाना चुकाना ही पड़ेगा! अब रही, बंदरों से पिंड छुड़ाने की बात! तुमने शहर में जिन लोगों के पास ये बंदर ख़रीदे हैं, उन्हें पकड़ने के लिए उन्हीं लोगों को बुला लाओ। इसके पीछे जो कुछ ख़र्च होगा, वह तुम्हीं दोनों को उठाना होगा। यह सारा काम जल्दी हो जाना चाहिए! देरी करोगे तो तुम्हें इसके दुगुना हर्जाना चुकाना पड़ेगा।"

मुखिये की बातें सुनने पर ज्ञानचंद और शोभाचंद के मुँह बंद हुए। वे उसी वक़्त बंदरों को फँसाने वाले लोगों की की खोज में शहर की ओर चल पड़े।

बेचारे विदूषक

एक राजा का मंत्री किसी भी कानून को अमल करने के पहले दरबारी विदूषक को अलग बुलाकर उससे पढ़वा लेता, तब उस कानून का परिचय जनता को करवाता था।

इस प्रकार कई साल बीत गये। इस बीच विदूषक का घमण्ड बढ़ गया। एक दिन उसने मंत्री से पूछा—"महामंत्री जी, आप किसी भी कानून को अमल करने के पहले मुझ से पढ़वा कर उसका अर्थ समझ लेते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि और लोगों में जो प्रतिभा नहीं है, वह मेरे अंदर है। ऐसी हालत में क्या बात है कि दरबारी लोग मेरा वैसे आदर नहीं करते, जैसे आपका आदर करते हैं?"

मंत्री ने मुस्कुरा कर जवाब दिया—"इसका मतलब यह नहीं कि तुम एक बड़े प्रतिभाशाली हो, बल्कि मैं इसलिए हर कानून को तुमसे पढ़वा कर उसका अर्थ तुम्हारे मुँह से समझ लेता हूँ कि अगर वह कानून तुम्हारी समझ में आ गया तो समझ लो कि हमारे राज्य के हर एक व्यक्ति की समझ में आ सकता है!"

जब विदूषक ने समझ लिया कि मंत्री की समझ में वह कैसा बेवकूफ़ है, तब से बेचारे विदूषक का घमण्ड जाता रहा।

अंधविश्वास

धनंजय दंपति के रागिनी इकलौती संतान थी। इसलिए उस दंपति ने रागिनी को बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा। उनका विश्वास था कि रागिनी बड़ी ही क़िस्मतवर है। इस कारण जब भी मौक़ा मिलता, वे रागिनी से कहा करते—"बेटी, तुम बड़ी भाग्यशालिनी हो! तुम जिस घर में क़दम रखोगी, उस घर की क़िस्मत खुल जाएगी।"

धीरे-धीरे रागिनी के मन में उसके माता-पिता की बातों पर विश्वास जम गया। दूसरों के साथ बातचीत करते वक़्त वह यह भाव प्रकट कर देती कि वह बड़ी ही भाग्यशालिनी है। थोड़े साल बाद आनंद मोहन के साथ उसकी शादी हुई जो शहर में कोई नौकरी करता था।

रागिनी के ससुराल में आने के थोड़े दिन बाद आनंद मोहन की पदोन्नति हुई। उसने घर लौटते ही अपनी पत्नी से कहा—"सुनो रागिनी, ओहदे के साथ हमारी तनख्वाह भी बढ़ गई! अब हम लोग पहले से कहीं ज्यादा आराम से अपनी ज़िंदगी बसर कर सकते हैं।"

रागिनी ने मुस्कुरा कर जवाब दिया—"वाह, यह भी ख़ूब है। शायद आप नहीं जानते कि आपके ओहदे के बढ़ने का कारण मैं हूँ।"

आनंद मोहन अचरज में आकर बोला—"मेरे ओहदे के बढ़ने का कारण घर पर रहने वाली तुम कैसे हो सकती हो?"

"कुछ लोग जैसे जन्म से ही दरिद्र होते हैं, वैसे कुछ लोग जन्म से ही भाग्यवान भी होते हैं। मैं इसमें दूसरे तबके की हूँ। मैं जिस घर में क़दम रखूंगी उस घर की क़िस्मत खुल जाती है! अब तो समझ गये हैं न, आपके ओहदे के

राज मोहन

बढ़ने का कारण क्या है?" रागिनी ने समझाया।

"अब तुम अपनी बकवास बंद करो। तुमने मेरे घर में क़दम रखा, इसलिए मेरा ओहदा नहीं बढ़ा, बल्कि मैं आज तक जो नौकरी करता आ रहा हूँ, उसे मैंने बड़ी जिम्मेदारी और अनुशासन में रहकर किया, इसीलिए मेरे अधिकारियों ने मेरा ओहदा बढ़ाया है।" आनंद मोहन ने असली बात बताई।

"तो इसका मतलब है कि आपके अधिकारी आज तक आप की जिम्मेदारी और अनुशासन को समझ नहीं पाये और मेरे आपके घर में क़दम रखने के बाद समझ गये?" रागिनी ने मजाक़ किया।

आनंद मोहन ने सोचा कि इस मामले को लेकर उसकी पत्नी के साथ तर्क-वितर्क करने से कोई फ़ायदा नहीं, वह बात को आगे बढ़ाये बिना चुप रह गया।

उसी दिन आधी रात के क़रीब बगल वाले कमरे में सोने वाली आनंद मोहन की माँ चीख उठी—"बेटा, गहने व साड़ियाँ वाला बक्सा मैंने चारपाई के नीचे रखा था, उसे कोई चोर उठा ले गया है। देखो न उस बदमाश ने दीवार में कैसे बड़ी सेंध लगा रखी है!" ये शब्द कहते वह रो पड़ी।

आनंद मोहन अपनी माँ की चीख़-पुकार सुनकर अपनी पत्नी के साथ माँ के कमरे में पहुँचा और उसे समझाने लगा—"माँ, जो

कुछ हुआ, सो हो गया। अब रोने-धोने से फ़ायदा ही क्या है? शांत हो जाओ।"

पर आनंद मोहन की माँ रागिनी की ओर आँखें लाल करके देखते हुए बोली–"तुम्हें मुझे सांत्वना देने की कोई ज़रूरत नहीं है! क्या आज तक कभी इस घर में चोरी हुई? हमारी क़िस्मत ही फूट गई है। तुम्हारी पत्नी ने जिस घड़ी में इस घर में क़दम रखा, वह घड़ी ही कुछ ऐसी है।"

"माँ, तुम रागिनी को दोष क्यों देती हो? इस चोरी और रागिनी के इस घर में क़दम रखने के साथ संबंध ही क्या है?" आनंद मोहन ने अपनी माँ को डांटा।

आनंद मोहन की माँ अपनी आँखें पोंछते हुए बोली–"बेटा, किसी-किसी के क़दमों के पीछे दुर्भाग्य की देवी चलती रहती है। उसी का फल है यह।"

सास की ये बातें सुनने पर रागिनी का दुख उमड़ पड़ा। वह उसी वक़्त पिछवाड़े के किवाड़ खोल कर कुएं की ओर दौड़ पड़ी। आनंद मोहन उसे रोकते हुए बोला–"तुम भी क्या पागल हो गई हो? यह तुम क्या करने जा रही हो?"

"आप की माँ के मुंह से ऐसी बातें सुनने के बाद मेरे जीने से फ़ायदा ही क्या है?" रागिनी ने रोते हुए पूछा।

आनंद मोहन ने अपनी पत्नी को समझा-बुझा कर कहा–"तुम मेरी माँ की बातों पर ध्यान मत दो। जैसे तुमने सोचा कि तुम्हारे आने से मेरा ओहदा बढ़ गया है, वैसे वह भी सोच रही है कि तुम्हारे द्वारा ससुराल में क़दम रखने के बाद ऐसी मुसीबतें पैदा हो रही हैं! अंध विश्वासों में तुम दोनों एक से एक बढ़कर हो।"

"सास की बातें भले ही कटुतापूर्ण क्यों न हो, पर सचमुच उन बातों ने मेरी आँखें खोल दीं! आप का कहना सत्य है। मैंने अंध विश्वासों में पड़कर अपने को भाग्यशालिनी मानते हुए कई लोगों के दिलों को दुखाया है। अब मेरी अक्ल ठिकाने लग गई है!" यों पछताते हुए रागिनी ने अपने आंचल से आंसू पोंछ लिये।

धर्माचरण

प्राचीन काल में काशी राज्य पर ब्रह्मदत्त शासन करते थे। उसी काल में बोधिसत्व ने धनंजय के नाम से कुरु राजा के रूप में इन्द्रप्रस्थ में जन्म लिया। उनके राज्य में वक़्त पर पानी बरसता था, अकाल कभी पड़ता न था। प्रजा सुखी थी।

सारे जंबू द्वीप में खबर फैल गयी कि धर्माचरण और दान करने में इद्रप्रस्थ के राजा धनंजय की बराबरी करने वाले कोई नही हैं।

उन्हीं दिनों में दंतपुर को अपनी राजधानी बनाकर कलिंग देश पर कालिंग नामक राजा राज्य करते थे। उस राज्य में एक बार भयंकर अकाल पड़ा। जनता भूखों मरने लगी। कई बच्चे अपनी माताओं की गोद में ही मर गये। जनता में हाहाकार मच गया।

देश की उस बुरी हालत देख राजा कालिंग का दिल पसीज उठा। उन्होंने अपने मंत्रियों को बुलाकर पूछा—"इस वर्ष हमारे देश में ऐसे भयंकर अकाल पड़ने का कारण क्या है? इस बुरे हाल से बचने का उपाय क्या है?"

मंत्रियों ने जवाब दिया—"महाराज, देश के अन्दर जब धर्म की हानि होती है, तभी ऐसे उत्पात हुआ करते हैं। इंद्रप्रस्थ के राजा धनंजय बड़ी ईमानदारी से अपने धर्म का पालन करते हैं! इसीलिए उस देश में बराबर हर महीने तीन बार वर्षा होती है; देश में कभी अकाल नहीं पड़ता। जनता सुखी है और देश समृद्ध है।"

"तब तो तुम लोग एक काम करो। आज ही इन्द्रप्रस्थ जाकर राजा धनंजय के दर्शन करो। उनके द्वारा सोने के पत्रों पर धर्म-सूत्र लिखवा कर ले आओ। हम भी

जातक कथा

उन सूत्रों को अमल करके हमारे देश को सुखी और संपन्न बना लेंगे।" राजा कालिंग ने समझाया।

कलिंग देश के मंत्री स्वर्ण पत्र लेकर इंद्रप्रस्थ पहुँचे। राजा धनंजय के दर्शन करके बोले–"महाराज, हम कलिंग देश के निवासी हैं। हमारे देश की प्रजा भयंकर अकाल का शिकार हो गई है। आप तो धर्मात्मा हैं, धर्माचरण करते हुए प्रजा पर शासन करते हैं। इसीलिए आपकी प्रजा सुखी और संपन्न है। हमारे राजा के द्वारा जिन धर्मों का पालन करना है, वे धर्म-सूत्र आप इन सोने के पत्रों पर लिख कर दीजिए। हमारे राजा उन धर्म-सूत्रों का पालन करके जनता को सताने वाले अकाल से प्रजा को मुक्त करेंगे।" इन शब्दों के साथ कलिंग देश के मंत्रियों ने सोने के पत्रों को धनंजय के सामने रखा।

धनंजय ने प्रणाम करके कहा–"महा मंत्रियो, क्षमा कीजिए। इन पत्रों पर धर्म-सूत्र लिखने की योग्यता में नहीं रखता। क्योंकि एक बार मेरे द्वारा धर्म का उल्लंघन हुआ है। हमारे देश में तीन सालों में एक बार कार्तिक उत्सव होता है। उस वक़्त राजा को एक तालाब के किनारे यज्ञ करके चारों तरफ़ चार बाण छोड़ने पड़ते हैं, एक बार मैंने जो चार बाण छोड़ दिये, उन में से तीन तो हाथ लगे, मगर चौथा बाण तालाब में गिर गया। उसके आघात से मछलियाँ और मेंढक मर गये होंगे। इस प्रकार मेरे द्वारा अधर्माचरण हुआ है। अगर मेरे राज्य में अत्याचार, अन्याय और तक़लीफ़ें नहीं हैं तो इसके कारण भूतकालीन शासक वर्ग में कोई और होगा। आप लोग कृपया इसका पता लगा कर देखिये।"

ये बातें सुन मंत्री सब आश्चर्य में आ गये। इसके बाद वे लोग राजमाता मायादेवी के पास पहुँचे। सारी बातें उन्हें सुनाकर बोले–"माताजी, आप कृपया हमारे वास्ते धर्म-सूत्र लिख कर दीजिए।"

"बेटे, मैंने भी धर्म का अतिक्रमण किया है। एक बार मेरे बड़े बेटे ने मुझे सोने की एक माला भेंट की। मैंने अपनी बड़ी बहू को संपन्न परिवार की समझ कर वह माला छोटी बहू को दे दी है। लेकिन दूसरे ही पल में मेरे भीतर का पक्षपात मुझे मालूम हुआ और इस बात का मुझे बड़ा दुख हुआ। इसलिए दूसरों को धर्म-सूत्र लिख कर देने की योग्यता में नहीं रखती। आप लोग कृपया किसी योग्य व्यक्ति के पास जाइये।"

इसके बाद कलिंग देश के मंत्री राजा के भाई नंद के पास पहुँचे। उन्होंने भी एक बार धर्म का अतिक्रमण करने की बात बताई—"मैं रोज शाम को अपने रथ पर अंत:पुर में जाता हूँ। किसी दिन रात को वहीं पर रह जाता हूँ। अगर में अपना चाबुक रथ पर छोड़ जाता हूँ तो इसका मतलब है कि में रात को अंत:पुर में नहीं टिकता। ऐसी हालत में रथ का सारथी मेरे इंतज़ार में बैठा रहता है। यदि में चाबुक अपने साथ ले जाता हूँ तो सारथी रथ हांक ले जाता है, और दूसरे दिन सबेरे रथ ले आता है। एक दिन में चाबुक को रथ पर छोड़ कर अंत:पुर में चला गया। उस दिन अंत:पुर से लौटने का मेरा विचार था। लेकिन इस बीच जोर से पानी बरसा। राजा ने, जो मेरे बड़े भाई हैं, मुझे लौटने नहीं दिया; इस कारण में रात को अंत:पुर में ही रह गया। पानी में भीगते मेरा सारथी रात भर रथ पर बैठा ही रह गया। उसे इस प्रकार तक़लीफ़ पहुँचा कर मैंने धर्म का अतिक्रमण किया है।"

इसके बाद कलिंग के मंत्री यह सोचकर राजपुरोहित के पास पहुँचे कि कम से कम वे तो उनकी इच्छा की पूर्ति करेंगे। लेकिन उन्होंने भी धर्म का अतिक्रमण करने की घटना बताई—"एक दिन में राज महल को जा रहा था। रास्ते में मुझे एक रथ दिखाई दिया। उस पर सोने का मुलम्मा

चढ़ाया गया था। उसे देखते ही मेरे मन में लालच पैदा हो गई। मैंने सोचा कि यदि राजा मुझे यह रथ दान कर दे तो क्या ही अच्छा होगा! मैं जब राजा के पास पहुंचा, तब वे मुझे देखकर बोले– "पुरोहितजी, यह रथ मैं भेंट करता हूँ, इसे आप ले जाइये।" उसी वक़्त मुझे अपनी लालच की याद हो आई और पछताते हुए मैंने उस रथ को लेने से इनकार किया। इसलिए मैं आपको धर्म-सूत्र लिख कर नहीं दे सकता।"

कलिंग देश के मंत्रियों की समझ में कुछ नहीं आया। आखिर वे इंद्रप्रस्थ के महा मंत्री के पास पहुंचे। वे भी उहें निराश करते हुएं बोले–"मैं एक दिन एक किसान के खेत की माप लेने गया। माप के मुताबिक़ जहाँ मुझे लकड़ी गाड़नी थी, वहाँ पर एक बिल था। मेरे मन में शंका पैदा दो गई कि उस बिल में किसी प्राणी का निवास हो सकता है। लेकिन अगर थोड़ा हटकर लकड़ी गाड़ दूं तो किसान का नुकसान होगा! उसके थोड़ा आगे गाड़ने पर राजा का नुक़सान हो सकता है! इसलिए मैंने उस बिल में ही लकड़ी गाड़ने की आज्ञा दी। उसी वक़्त बिल मे से एक केकड़ा बाहर निकलते लकड़ी के आघात से मर गया। इसलिए मैंने भी धर्म का अतिक्रमण किया है। ऐसी हालत में मैं आप लोगों को धर्म-सूत्र लिखकर कैसे दे सकता हूँ?"

इस पर कलिंग देश के मंत्रियों के मन में एक उपाय सूझा। उन लोगों ने जो जो कहानियाँ सुनी थीं; उन सबको सोने के पत्रों पर लिख दिया। उन्हें ले जाकर राजा को सुनाया। राजा कालिंग ने समझ लिया कि धर्म के प्रति ईमानदार रहना ही सबसे बड़ा उत्तम धर्म है। इस प्रकार आत्म विमर्श करके उन्होंने शासन करना शुरू किया। इसके बाद कुछ ही दिनों में पानी बरसा और राज्य भर में अकाल दूर हो गया। उस दिन से कलिंग देश की प्रजा सुख पूर्वक अपनी जिंदगी बिताने लगी।

पृथ्वीराज – संयोगिता - ३

पृथ्वीराज के मित्र और दरबारी कवि चन्दबरदाई अपने राजा से मिला। तब वे दोनों वेष बदल कर कनौज लौटे। राजा जयचन्द्र के घुड़सवारों ने उन्हें बन्दी बनाने की कोशिश की, लेकिन वे अपनी इस कोशिश में कामयाब न हुए।

कनौज राज्य की सीमा पर पृथ्वीराज के कुछ वीर योद्धा छिपे हुए थे। पृथ्वीराज और संयोगिता ने जब जयचन्द्र के राज्य की सीमा पार की, तब वे बाहर आये और जयचन्द्र के सैनिकों का सामना करके उन्हें मार भगाया।

इस घटना को जयचन्द्र ने अपनी बेइज्जती माना। उसे बड़ा दुख हुआ। इसके बाद वह दिन-रात पृथ्वीराज से बदला लेने की तरकीब सोचने लगा। दूसरे देश के राजपूतों से उसने गिड़गिड़ा कर मदद मांगी, लेकिन कोई भी उसकी मदद करने को तैयार न हुआ।

इस हालत में जयचन्द्र के मन में एक दुर्बुद्धि पैदा हुई। उसने गोरी मुहम्मद के पास संदेशा भेजा कि अगर वह पृथ्वीराज के राज्य पर हमला करना चाहता है तो वह उसकी मदद करने के लिए तैयार है। इस पर गोरी मुहम्मद बड़ा खुश हुआ। उसके मन में जयचन्द्र की मदद पाकर दिल्ली पर विजय पाने की इच्छा पैदा हुई।

दिल्ली में पृथ्वीराज ने रानी संयोगिता के वास्ते एक नया महल बनवाया। उन दोनों का वक्त आनंदपूर्वक बीतने लगा। अब लड़ाई का डर न था, इसलिए पृथ्वीराज ने जनता के कल्याण के वास्ते कई नई योजनाएँ शुरू कीं।

पर अचानक गोरी मुहम्मद और जयचन्द्र की सेनाएँ दिल्ली पर कब्जा करने निकल पड़ीं। उनके सैनिक रास्ते में पड़ने वाले गाँवों को जलाने लगे। सीमा की रक्षा करने वाले पृथ्वीराज के मुट्ठी भर सैनिक और गाँवों में बसने वाली प्रजा में उस अचानक हुए हमले को देख आतंक छा गया।

सीमा पर पहरा देनेवाले पृथ्वीराज के सैनिकों ने दिल्ली पहुँचकर दुश्मन के हमले का उन्हें समाचार सुनाया। पृथ्वीराज ने उसी वक्त लड़ाई के लिए अपने सैनिकों को तैयार करना शुरू किया।

रानी संयोगिता ने खुद पृथ्वीराज के सर पर शिरस्त्राण पहना दिया। पृथ्वीराज रानी से विदा लेकर दुश्मन का सामना करने निकल पड़े। इस बीच दुश्मन की फ़ौज दिल्ली नगर की सीमा पर आ पहुँची।

दिल्ली की जनता और पृथ्वीराज ने कल्पना तक नहीं की थी कि दुश्मन इतनी जल्दी राजधानी तक पहुँच सकता है। फिर भी पृथ्वीराज ने अपने सैनिकों में उत्साह भर दिया और दुश्मन की फौज का हिम्मत के साथ सामना किया।

पृथ्वीराज के सैनिकों ने बड़े ही साहस और पराक्रम के साथ दुश्मन से लोहा लिया। लेकिन गोरी मुहम्मद और जयचंद्र-दोनों की मिली हुई सेना पृथ्वीराज की सेना से कई गुने ज्यादा थी। आख़िर पृथ्वीराज युद्ध में लड़ते-लड़ते घायल होकर मर गये।

यह ख़बर चंद मिनटों में ही रानी संयोगिता को मिली। रानी ने चिता में जलकर प्राण देने के लिए अग्निकुंड तैयार करवाया। इसके बाद पृथ्वीराज के चित्र पर फूल माला पहनाकर चिता में कूद पड़ी।
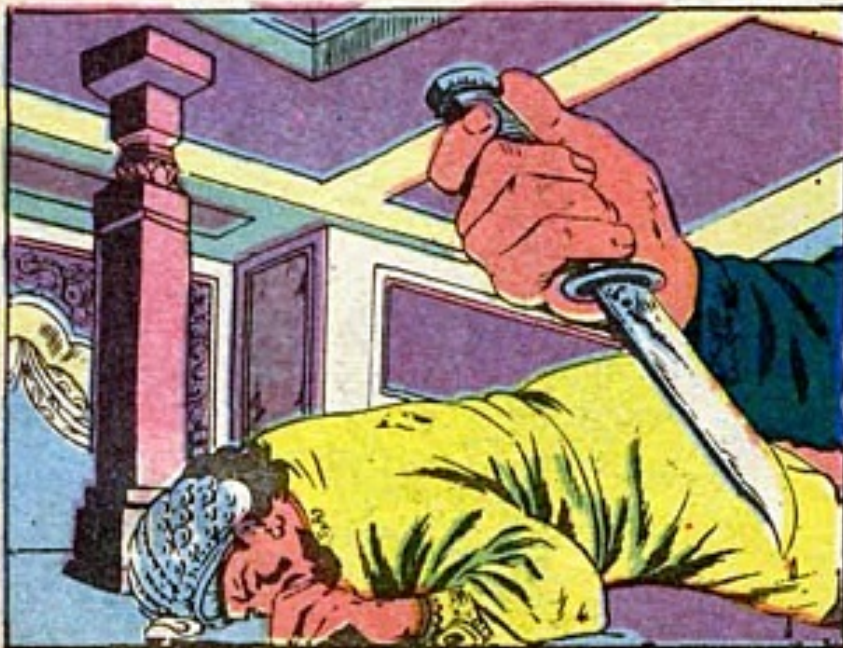
पृथ्वीराज की मृत्यु के साथ दिल्ली में हिन्दुओं के शासन का अंत हुआ। लेकिन राजा जयचन्द्र को अपनी इस विजय पर गर्व करने का मौक़ा देर तक नहीं मिला। दूसरे ही साल दुष्ट गोरी मुहम्मद ने कनौज नगर पर चढ़ाई कर दी। उसके क्रूर सेनापति कुतुबुद्दीन ने बेरहमी के साथ जयचन्द्र को मार डाला।

पत्नी भक्त

रामनारायण पत्नी भक्त है। वह अपनी पत्नी से कहे बगैर कोई काम नहीं करता। न उसकी बात को कभी टालता है। इस वजह से अगर कभी उससे किसी की मुलाक़ात हो जाती तो उसके सामने तो कुछ कहते न थे; मगर पीठ पीछे 'पत्नी भक्त' कहकर उसका मजाक़ उड़ाते थे। धीरे-धीरे उसके सामने ही मजाक़ उड़ाने लगे। रामनारायण की समझ में न आया कि इस अफ़वाह को कैसे दूर करे।

रामनारयण के सोमदत्त नामक एक दोस्त था। उसने अपने दोस्त के सामने यह समस्या रखी। सारी बातें सुनकर सोमदत्त ने सुझाव दिया—"दोस्त, तुम्हारे बारे में इस अफ़वाह के फैलने का कारण यह है कि तुम अपनी पत्नी की हर बात को आँख मूंद कर मान लेते हो, कभी उनका विरोध नहीं करते। इसलिए तुम ऐसा करो कि इस बार तुम अपनी पत्नी की बातों को काट दो, देखें क्या होता है?"

रामनारायण पल भर सोचता रहा। अगर वह अपनी पत्नी की बात मान न लेगा, तो वह हो-हल्ला मचायेगी, जिससे सब के सामने उसका अपमान होगा।

ये बातें अपने दोस्त को बताईं। दोस्त ने मस्कुराते हुए कहा—"अब समझ गये हो न? तुम इस हालत में पहुँच गये हो कि तुम भूल से ही सही अपनी पत्नी की बात का खंडन न कर सकोगे। इसलिए मैं तुम्हें यह सुझाव देता हूँ कि तुम अपनी पत्नी को अपने अनुकूल बना सकते हो?"

रामनारायण फिर सोच में पड़ गया। यह शर्त तो उसे कहीं ज्यादा मुश्किल मालूम हुई। क्योंकि पत्नी की बात को काटना या उसकी बात अनसुनी कर देना तो उसके हाथ की बात थी। मगर उसको

श्यामला गर्ग

दंपति को भोजन के लिए न्योता दूंगा। इस बहाने मुझे तुम्हारी पत्नी के दिल को समझने का मौक़ा मिलेगा।" सोमदत्त ने सुझाव दिया।

रामनारायण को यह सलाह बड़ी अच्छी लगी। दो-तीन दिन बाद सोमदत्त ने रामनारायण के घर पहुंच कर उन दोनों को न्योता दिया।

दर असल बात यह है कि रामनारायण की पत्नी स्वभाव से झगड़ालू नहीं है। उसके मन में सिर्फ़ यही इच्छा है कि वह और नारियों से कुछ विशिष्ट कोटि की कहलावे। सब औरतें अगर यह कहे कि 'कांताबाई की क़िस्मत को क्या कहें, उसका पति उसकी हर बात को मान लेता है।' ऐसी बातों से कांताबाई को बड़ी तसल्ली होती है।

अपनी इच्छा के अनुकूल बनाना उसके हाथ की बात नहीं है, यह तो सिर्फ़ उसकी इच्छा और अनिच्छा पर निर्भर है।

रामनारायण को गहरी सोच में पड़े देख सोमदत्त इस बार खिल-खिलाकर हँस पड़ा और बोला—"दोस्त, यह साबित हो चुका है कि मैंने तुम्हें जो दो सलाहें दीं दोनों को तुम अमल नहीं कर पाओगे। ऐसी हालत में तुम्हारे प्रति जो अफ़वाह फैल गई है, उसे दूर करना कठिन है।"

सोमदत्त उदास होकर बोला—"तब तो क्या कोई और उपाय नहीं है?"

"तब तो एक काम करेंगे। हमारे घर में कोई मांगलिक कार्य बताकर मैं तुम

रामनारायण कांताबाई को साथ लेकर सोमदत्त के घर पहुंचा। दावत एकदम तैयार थी। सोमदत्त बड़े ही स्नेह के साथ दोनों का स्वागत करते बोला—"मैंने उस दिन बताया था कि मेरे घर में कोई मांगलिक कार्य है, लेकिन ऐसी कोई बात नहीं है। हमारी शादी की यह दसवीं साल गिरह है। इसी वास्ते हम तुम दोनों को यह दावत दे रहे हैं।"

दावत के वक़्त हर छोटी सी बात को लेकर सोमदत्त अपनी पत्नी को डांट-डपट

रहा था–दाल में नमक कहीं ज़्यादा है। सब्जी में मिर्च ज़्यादा है। यों जोर-जोर से चिल्लाता रहा, फिर भी उसकी पत्नी बड़ी विनय के साथ अपनी गलती के लिए माफ़ी माँगती रही।

सोमदत्त का व्यवहार देख कांताबाई को लगा कि उसके तन-बदन में मानो सांप और बिच्छू लोट रहे हो, उसकी नज़र में सोमदत्त बड़ा अत्याचारी मालूम होन लगा।

दावत के खतम होते ही कांताबाई सोमदत्त की पत्नी को अलग ले जाकर बोली–"तुम्हारे पति हर छोटी सी बात को लेकर तुम्हें डाँटते-डपटते रहें और तुम गूंगे की तरह सर हिलाते चुप रह गई। यह मुझे अच्छा न लगा। अगर तुम्हारी जगह मैं होती तो...?"

सोमदत्त की पत्नी मुस्कुराकर बोली–"कांताबाई, गृहस्थी के मामलों में पति तो हमेशा पत्नी के सुख-दुखों में हिस्सा बाँट लेते हैं। हर तरह से उसकी मदद के लिए तैयार रहते हैं! ऐसे पति का आदर करना पत्नी का कर्तव्य हो जाता है। अपनी बात को मनवाने का हठ करना और न सुनने पर उस पर अधिकार चलाने की चेष्टा करना, अच्छी आदत नहीं है। मेरे पति इस वक़्त मुझ पर नाराज़ हो गये हैं; लेकिन बाद को वे अपनी जल्दबाजी के लिए पश्चात्ताप करते हैं। यह बात मैं अनुभव पूर्वक जानती हूँ।"

कांताबाई सोच में पड़ गई। सोमदत्त की पत्नी की बातें उसे वाजिब मालूम हुईं।

रामनारायण घर लौटते ही खीझ भरे स्वर में बोला–"छी:, छी:! मैंने कभी नहीं सोचा था कि सोमदत्त ऐसे मूर्ख और राक्षस है। पत्नी को हर बात पर डांटता है। बेचारी भली औरत है, इसीलिए चुप रह गई।"

कांताबाई रोष में आकर बोली–"मेरे एक सवाल का जवाब तो दीजिए। आप मेरी हर बात पर सर हिलाते रहते हैं, क्या सोमदत्त के जैसे आप भी पौरुष के साथ व्यवहार नहीं कर सकते?"

रामनारायण चौंककर बोला–"मैं ऐसा कठोर व्यवहार पसंद नहीं करता। भले ही लोग मुझे पत्नी-भक्त माने, इससे मेरा बनता-बिगड़ता क्या है? मेरी बात सुनने के लिए मैं तुम पर ज़बर्दस्ती करना नहीं चाहता।"

"आइंदा ऐसा कभी नहीं हो सकता! आपको सब के बीच सोमदत्त जैसे शान के साथ चलना होगा। अपने पति की इज्जत करने में मैं उनकी पत्नी से किसी बात में कम नहीं हूँ।"

अपनी पत्नी के अन्दर यह परिवर्तन देख रामनारायण बड़ा खुश हुआ। लेकिन जो लोग उसे पत्नी भक्त बताते हैं, उन्हें इस बात का पता लग जाय तो क्या ही अच्छा हो! एक हफ़्ते बाद रामनारायण ने अपनी जन्म गांठ के बहाने अपने परिचित मित्रों को दावत पर बुलाया। सभी लोग खुद इस बात की जांच करने के ख्याल से दावत में आये कि आखिर देख तो ले कि रामनारायण कहाँ तक पत्नी भक्त है?

मगर ऐसे लोग एकदम निराश हो गये। क्यों कि रामनारायण छोटी-छोटी बातों को लेकर अपनी पत्नी को डांटता रहा, फिर भी कांताबाई चुप रही, बड़ी विनय पूर्वक व्यवहार करने लगी।

रामनारायण एक दिन सोमदत्त को देखने गया और उसकी सलाह की वजह से अपनी पत्नी के भीतर जो परिवर्तन आया, इसके प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

सीधा सवाल

एक गाँव में माता प्रसाद नामक एक संपन्न गृहस्थ था। वह अपनी भलमानसी और अक़्लमंदी के लिए सारे गाँव में मशहूर था। अगर कोई झूठ बोलता तो माता प्रसाद उससे घुमा-फिरा कर कोई सवाल पूछता और उसकी पोल खोल देता।

माताप्रसाद के विवाह योग्य एक कन्या थी। उसकी जमीन-जायदाद देख कई लोग माताप्रसाद के साथ रिश्ता जोड़ने आ धमकते और अपनी जमीन जायदाद के बारे में बढ़ा-चढ़ाकर डींग हाँकते। ऐसे लोगों से माताप्रसाद एकाध सवाल पूछकर सच्ची बात का पता लगा लेता और वापस भेज देता।

एक दिन किसी दूर के गाँव से दीनू चौधरी नामक एक आदमी आया, माताप्रसाद से बोला—"मेरा बेटा सब तरह से आप की बेटी के लिए लायक़ वर है। अब जमीन-जायदाद की बात रही—अगर अप बुरा न माने तो सच बता दूं? आप की जायदाद से कहीं ज़्यादा ही होगी।"

माताप्रसाद ने बड़े ही इतमीनान से पूछा—"आप बुरा न समझें, आप से सिर्फ़ मैं एक ही सवाल पूछना चाहूँगा। क्या आप के घर में चूहे, बिल्लियाँ और कुत्ते हैं?"

दीनू चौधरी ने खीझते हुए जवाब दिया—"छी :, छी :, ये सब मेरे घर में नहीं हैं।"

"तब तो आप का यह रिश्ता मुझे पसंद नहीं है।" माताप्रसाद ने तपाक से जवाब दिया। दीनू चौधरी के चले जाने पर माताप्रसाद की पत्नी ने पूछा—"शादी की बातों के बीच आपने चूहे, बिल्ली और कुत्तों की बात क्यों छेड़ दी?"

"सुनो—जहाँ अनाज होता है, वहाँ पर चूहे होते हैं, जहाँ दुधारू गायें और भैंसें होती हैं, वहाँ बिल्लियाँ होती हैं, जहाँ जमीन-जायदाद होती है, वहाँ पर पहरा देने के लिए जरूर कुत्ते पालते हैं। उस सज्जन के घर ये तीनों नहीं हैं। ऐसी हालत में उनके यहाँ जमीन-जायदाद क्या रहेगी?" माताप्रसाद ने समझाया।
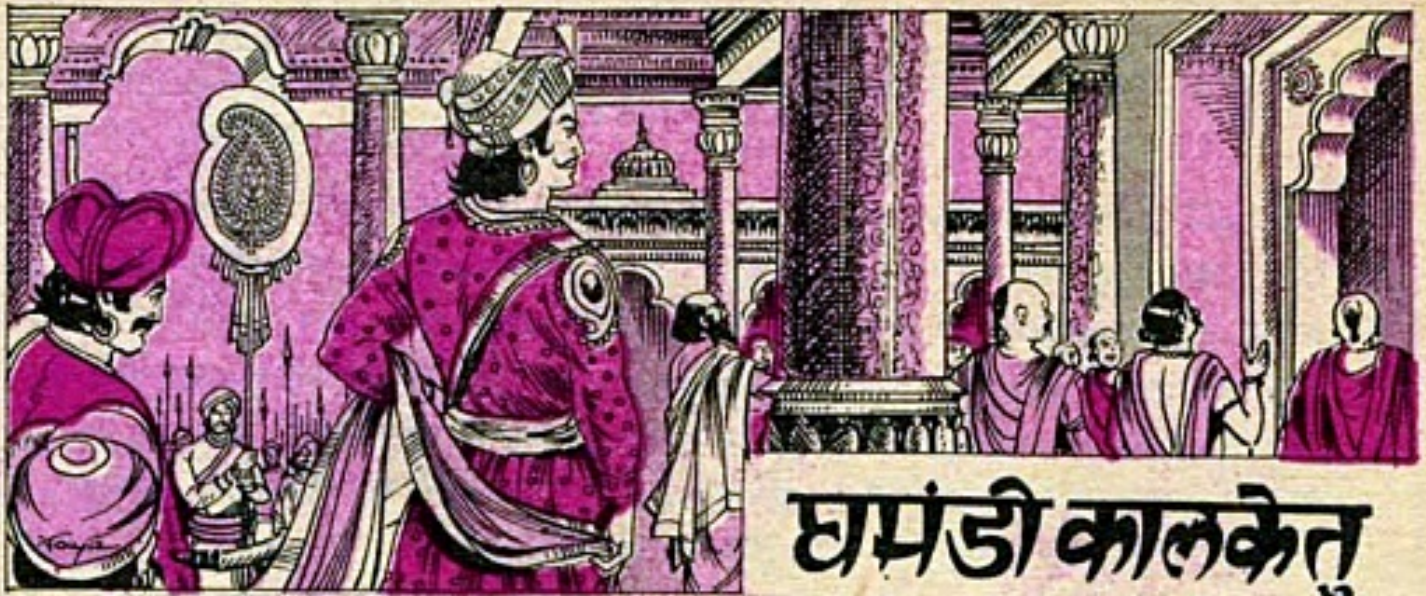
घमंडी कालकेतु

किसी जमाने में कांचनपुर पर कालकेतु राज्य करते थे। राजा कालकेतु बड़े ही घमण्डी थे। उनके अन्दर यह अहंकार बढ़ता गया कि वे तो सर्व शक्तिमान हैं और सारे संसार और उनकी सृष्टि करने वाले ब्रह्मा भी उनका कुछ बिगाड़ नहीं सकते।

राजा के हितैषी और मंत्री उन्हें बराबर यह समझाते थे–"महाराज, यह वैभव और संपत्ति शाश्वत नहीं हैं। इन पर घमंड करना उचित नहीं है।" मगर अधिकार के गर्व में अंधे बने राजा के कानों में उनके हितवचन घुस न पाये। आखिर वे छोटे-बड़े का ख्याल तक किये बिना सबका तिरस्कार और अपमान भी किया करते थे। उनका विश्वास था कि राजपद से उन्हें कोई भी ताक़त हटा नहीं सकती। कांचनपुर के एक प्रमुख नगर में एक प्रसिद्ध मंदिर था। उस मंदिर में हर साल बड़े वैभव के साथ उत्सव मनाये जाते थे।

राजगद्दी पर बैठने के बाद एक दिन कालकेतु पहली बार अपने मंत्री, सामंत और बन्दीजन के साथ मंदिर के उत्सव को देखने चल पड़े। राजा जब मंदिर पहुँचे, उस वक़्त पंडित पुराण-पठन कर रहे थे। पुरोहित मधुर स्वर में श्लोक पढ़ रहे थे।

उन श्लोकों में से एक का अर्थ यों था– 'भगवान, आप सर्व शक्तिमान हैं। आप अपने संकल्प मात्र से राजा को रंक और रंक को राजा बना सकते हैं।'

उस श्लोक को सुनते समय राजा को लगा, मानो उनके तन-बदन पर साँप और बिच्छू लोट रहे हो! पूरे श्लोक को सुनने के बाद राजा अपने सहज अहंकार में आकर

२५ वर्ष पहले की चन्दामामा की कहानी

मन में गुनगुनाने लगे–"हूँ! भगवान संकल्प करते हैं। वे चाहे तो राजा को रंक और रंक को राजा बना सकते हैं। ये लोग पुराने पंथ के बावरे पंडित हैं। बेमतलब के पागलों के प्रलाप हैं ये श्लोक।"

राजा यों अपने मन में सोच ही रहे थे कि कोई अनहोनी बेहोशी उन्हें छा गई। उन्होंने जंभाइयाँ लेकर आँखें बंद कीं। होश में आने पर राजा ने आँखें खोल कर देखा, उनके चारों तरफ़ अंधेरा फैला हुआ था। उनके साथ आये हुए मंत्री, सामंत और बन्दीजन का कहीं पता नहीं था। टिमटिमानेवाली रोशनी तक कहीं समीप में नहीं थी।

कालकेतु घबड़ा गये। उनके बदन में पसीना छूटने लगा। उनका गला सूखता जा रहा था। उस अंधेरे में वे एक अंधे आदमी की तरह अपने हाथों से टटोलते गये, किसी तरह आखिर वे एक किवाड़ के पास पहुँचे। ज़ोर से दर्वाज़े पर दस्तक देते हुए चिल्लाने लगे–"अरे, यहाँ पर कोई है? दर्वाज़ा खोल दो। मैं इस देश का महाराजा कालकेतु हूँ। जल्दी किवाड़ खोल दो।"

ये चिल्लाहटें मंदिर के भीतर से सुनाई दे रही थीं। मंदिर के बाहर पहरेदार तैनात थे। ये चिल्लाहटें सुनकर वे लोग अचरज में आ गये और आपस में फुसफुसाने लगे–"महाराजा तो अभी अभी पूजा समाप्त कर मंदिर से बाहर चले गये हैं। उनको मंदिर से बाहर निकलते हमने खुद अपनी आँखों से देखा है। यह क्या? कोई अपने को महाराजा कालकेतु बता रहा है। यह कोई पागल है या शराबी?"
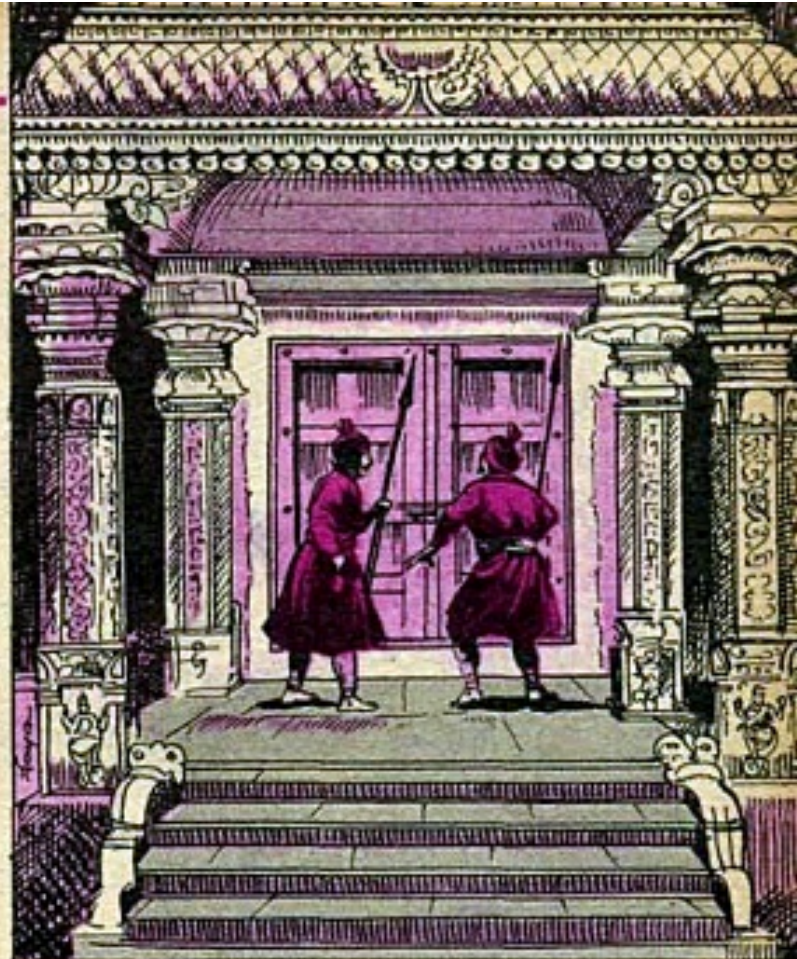
यों सोचते हुए पहरेदार ने हिचकिचाते हुए दर्वाज़ा खोल दिया, तब उसने देखा, कोई व्यक्ति बिजली के जैसे तेज गति के साथ अंधेरे में भाग खड़ा हुआ। मगर पहरेदार ने उसका पीछा करने की कोशिश न की।

कालकेतु मंदिर से निकल कर सीधे राजमहल में पहुँचे और अपने नौकरों को पुकारते हुए आदेश दिया–"यहाँ पर कौन है? हम मंदिर में सो रहे थे, तभी हमारी अनुमति लिये बिना मंत्री, सामंत और बंदीजन हमें छोड़ कैसे चले आये? हमारे प्रति ऐसी गुस्ताखी दिखानेवालों को तुरंत बंदी बना दो।"

उसी वक़्त सेनापति ने राजभटों को आज्ञा दी–"इस पागल को बंदी बना दो, दर असल यह बावरा आदमी राजमहल के भीतर कैसे घुस आया है? क्या तुम लोग सो रहे थे? इसे बंदी बनाओ।" फिर क्या था, यह आदेश पाते ही दूसरे ही पल में कालकेतु के हाथों में हथकड़ियाँ लगा कर उन्हें राजा के सामने हाजिर किया गया।

कालकेतु के रूप में सिंहासन पर उपस्थित देवदूत अपने सामने राजा को देखते ही मुस्कुरा उठे और पूछा–"तुम कौन हो?"

"मैं...? मैं...?" कहते कालकेतु हुंकार कर उठे। फिर पल-भर रुककर बोले–"तुम मुझे नहीं जानते हो? मैं महाराजा कालकेतु हूँ।" फिर राजभटों की ओर मुड़कर बोले–"यह धूर्त है। मेरा वेष धारण करके चला आया है। इसको बंदी बना दो।"

छद्म वेष में आये हुए देवदूत को कालकेतु के भीतर बढ़ते हुए अभिमान को देख हंसी आ गई। वे बोले–"यह तो कोई शराबी मालूम होता है। फिर भी समझदारी की बातें करता है। हमारे दरबार में यह तो एक विदूषक बनने लायक है। इसका नशा उतरने तक क़ैद में डाल दो।"

राजभटों ने कालकेतु को कारागार में ले जाकर बन्दी बनाया। उस वक़्त भी कालकेतु बराबर चिल्लाते रहे–"जानते हो, मैं कौन हूँ? मैं महाराजा कालकेतु हूँ।" पर उनकी चिल्लाहट की किसीने परवाह नहीं की। पागल को देख जैसे

लोग खिल-खिलाकर हँसते हुए मज़ाक उड़ाते हैं, वैसे ही वे लोग कालकेतु का मज़ाक़ उड़ाने लगे।

थोड़े दिन बाद देवदूत ने राजमहल में भारी पैमाने पर एक दावत दी। कई देशों के राजा और सामंत उस दावत में हाज़िर हुए। राजदरबार एकदम शोभायमान था।

उन सब के सामने देवदूत ने कारागार में बंद कालकेतु को हाज़िर करने का आदेश दिया। थोड़ी ही देर में कालकेतु वहाँ पर हाज़िर किये गये।

रंग-बिरंगे चीथड़ों से सिये हुए पहनावे के साथ कालकेतु हाज़िर हुए। उनके सिर पर विदूषक के द्वारा पहनी जाने वाली झब्बेदार टोपी लगी थी, हाथ में लंबी लाठी तथा कंधे पर किच-किच करते बंदर प्रत्यक्ष थे।

देवदूत ने उन सब राजाओं को कालकेतु को दिखाकर पूछा—"आप लोग जानते हैं कि यह कौन है?"

इस पर कालकेतु क्रोध में आकर दाँत भींचते बोले—"क्या आप लोगों ने मुझे नहीं पहचाना? मैं ही वास्तव में इस देश के सच्चे महाराजा कालकेतु हूँ। यह कोई मेरा वेष बनाकर जादू का नाटक खेल रहा है।"

इस पर सब राजा हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये और कालकेतु का परिहास करते बोले—"यह कोई बड़ा घमंडी मालूम होता

है लेकिन अक्लमंद-सा लगता है! बड़ा अच्छा स्वांग रचता है, एक कुशल मजाकिया है।" यह जवाब पाकर कालकेतु का दिल बैठ गया।

एक दिन राजा के रूपधारी देवदूत ने कालकेतु को अंतःपुर में बुला भेजा। उनसे पूछा—"सच-सच बता दो, तुम कौन हो?" यह सवाल सुनकर कालकेतु निराश हो लुढ़क पड़े। उन्हें लगा कि वह सचमुच पागल होता जा रहा है।

थोड़ी देर बाद वे अपने को संभाल कर बोले—"महाराज! मैं एक पागल हूँ। मानव तथा देवताओं की शक्ति को भी धिक्कारनेवाला अहंकारी हूँ, मूर्ख हूँ। मैं अभी समझ गया हूँ कि भगवान के अनुग्रह के अभाव में मेरी प्रजा भी मुझे पहचान नहीं पाई। मेरी आँखें खुल गईं। मेरा घमण्ड चूर-चूर हो गया है। मैं एक दीन और असहाय हूँ। जनता का दास हूँ।" यों आवेश में आकर कालकेतु दहाड़े मारकर रोने लगा।

इस पर देवदूत ने संतुष्ट होकर अपने दोनों हाथ उठा कर आशीर्वाद दिये और बोले—"तुम्हारे भीतर का अहंकार और अभिमान नष्ट हो गया है। तुम सचमुच इस वक़्त राजा हो और महाराजा कालकेतु हो।"

दूसरे ही पल में देवदूत गायब हो गया। कालकेतु के बदन पर लटकनेवाले रंग-बिरंगे चीथड़े राजोचित पहनावे के रूप में बदल गये। सर पर जो झब्बेदार टोपी पड़ी थी, वह रोशनी बिखरनेवाले रत्न खचित किरीट में बदल गई।

थोड़े दिन बाद कालकेतु ने फिर से उस मंदिर में बड़े पैमाने पर उत्सवों का इंतजाम किया। इस बार पुरोहितों के मुँह से निकले श्लोक सुनने पर राजा को आनंद हुआ, घृणा नहीं हुई। इस बार भगवान की शक्ति और जनता के प्रति विनयशील बन कर जयकार किया। उसी दिन से कालकेतु जनता में लोकप्रिय बन गये।

खजांची

कई शताब्दियों के पहले की बात है।

अमरपुर राज्य के राजा विजयसेन खजांची का पद भी खुद संभालते थे। राजा के द्वारा खजांची का काम भी निभाने का यह रिवाज उनके पिता के जमाने में शुरू हुआ था। क्योंकि उनके एक खजांची ने विश्वासघात करके खजाने को लूट लिया था।

धीरे-धीरे शासन संबंधी राजा की जिम्मेदारियाँ बढ़ती गईं। इस पर विजयसेन ने अपने बोझ को उतारने के विचार से किसी विश्वासपात्र व्यक्ति को खजांची के पद पर नियुक्त करना चाहा।

एक दिन राजा अपने मंत्री सुगुण गुप्त से बोले–"मेरी जिम्मेदारी कहीं ज्यादा बढ़ गई हैं, इसलिए खजाने का हिसाब दूसरे दिन के लिए टलता जा रहा है। मैं किसी विश्वासपात्र, योग्य और समर्थ व्यक्ति को खजांची के पद पर नियुक्त करना चाहता हूँ! इस संबंध में तुम्हारी क्या सलाह है?"

राजा के निर्णय पर मंत्री खुश हुआ और बोला–"खजाने का जिस दिन का हिसाब उसी दिन ठीक से करने वाले को नियुक्त करना उचित ही है, लेकिन इस संदर्भ में हमें आपके पिताजी के अनुभव को भी याद रखना होगा। इसलिए हमें यह पद किसी ईमानदार आदमी को सौंपना होगा।"

"मैं भी यही सोचता हूँ। लेकिन किसी अपरिचित को यह काम सौंपने के बजाय फिलहाल राज महल में काम करनेवालों में से किसी योग्य व्यक्ति को यह पद सौंपना ज्यादा मुनासिब होगा।" राजा ने कहा।

इसके बाद मंत्री ने खजांची के पद के बारे में एक विज्ञप्ति तैयार करके सभी

रामावतार शर्मा

राज कर्मचारियों के पास भेजा। लगभग सभी राज कर्मजारियों ने खजांची के पद के लिए आवेदन पत्र भेजे। मंत्री उन पत्रों को लेकर राजा के पास पहुँचा।

राजा ने उन सभी पत्रों की जांच की। उनकी दृष्टि में अनंत शर्मा नामक व्यक्ति और लोगों से कहीं ज्यादा योग्य और अनुभवी मालूम हुआ। यह बात उन्होंने मंत्री से बताई–"मेरे ख्याल से अनंत शर्मा खजांची के पद के लिए सबसे ज्यादा योग्य मालूम होता है। तुम्हारी क्या राय है?"

इस पर मंत्री ने अपना सुझाव दिया– "महाराज, खजांची के पद के लिए आवेदन पत्र भेजने वाले लोगों में से किसी को भी उस पद पर नियुक्त करना हमारे लिए हितकर नहीं है। मुझे ऐसा लगा कि ये सभी लोग उस पद को अपनी ख़ुदगर्जी पूरा करने के लिए इस्तेमाल करना चाहते हैं। राजमहल के कर्मचारियों में से सिर्फ़ ज्ञानवर्मा को छोड़ बाक़ी सबने आवेदन पत्र दिये हैं, मेरा विश्वास है कि वह ज्यादा ईमानदार है। आप उसको खजांची का पद दे दीजिए।"

मंत्री की सलाह पाकर राजा आश्चर्य में आ गये, और पूछा–"तब तो यह बताओ, दरख्वास्त वाला यह स्वांग तुमने क्यों रचा?"

"महाराज, मैंने राज कर्मचारियों के नाम जो विज्ञप्ति भेजी है, उस में मैंने साफ़ बताया है कि इस वक़्त वे लोग जो तनख़ाह पाते हैं, उससे कम खजांची के पद के लिए दिया जाएगा; फिर भी इतने सारे लोग अगर उस पद के पीछे भाग रहे हैं तो उनकी कुबुद्धि का पता चल ही रहा है। सिर्फ़ ज्ञानवर्मा ने आवेदन नहीं किया है।" मंत्री ने जवाब दिया।

राजा ने मंत्री की सूक्ष्म बुद्धि की तारीफ़ की। दूसरे दिन ज्ञानवर्मा को बुलवा कर मासिक एक हज़ार सिक्कों की तनख्वाह पर उसे खजांची नियुक्त किया।

अगत्स्य के मन में यह इच्छा अधूरी ही रह गई कि वातापि नगर के बीच जो महा शिला है, उसे विघ्नेश्वर की मूर्ति का रूप दिया जाय। लोपामुद्रा चित्रकला में बड़ी निपुण थी। उसने महा शिला की जांच करके उस शिला की प्रकृति के अनुरूप विघ्नेश्वर की रूप-रेखाओं वाला चित्र तैयार किया।

रेखा-चित्र तो तैयार हो गया, मगर उसके अनुरूप महा शिला में विघ्नेश्वर की प्रतिमा को गढ़ सकने वाले शिल्पी बड़ी कोशिश के बावजूद भी नहीं मिले। अगत्स्य चिंतित हो महा शिला के सामने बैठकर लोपामुद्रा के चित्र और सामने स्थित शिला को देखते अपना वक़्त गुजारने लगे।

जो भी शिल्पाचार्य वहाँ पर आये, वे उस चित्र को देख यह कहते लौट गये–"ऐसी प्रतिमा तो देव शिल्पी विश्व कर्म या दानव शिल्पी मय के द्वारा ही संभव है। दूसरों के लिए नहीं।"

शिल्पियों ने महा शिला पर अपनी छेनियाँ चलाकर कहा–"यह तो वज्र पाषाण है, इसे गढ़ने केलिए साधारण छेनी काम नहीं दे सकती। वज्र से निर्मित छेनी की जरूरत है। देवता या यक्ष लोग ही इसे गढ़ सकते हैं, मानव केलिए नामुमकिन है।"

उस समय देव शिल्पी विश्व कर्म की पत्नी विश्वकला जो विष्णु की मानस पुत्री है, रूठ कर अपने मायके चली गई थी। इस वजह से विश्व कर्म का मन चंचल था।

१६. विघ्नेश्वर की महान मूर्ति

जैसी कोई चीज़ चमक रही थी। वह देखने में शिल्पी जैसे लग रहा था।

अगत्स्य ने ध्यान से छेनी की ओर देखा, वह चीज़ हाथी दांत की बनी थी। उस तरुण शिल्पी ने अगत्स्य के समीप जाकर पूछा–"महर्षि, महा शिला के सामने बैठकर कोई मंत्रणा करते दीख रहे हैं। मैं तो काम की खोज में इधर चला आया हूँ।"

शिल्पी की मीठी बातों ने अगत्स्य के अन्दर गुदगुदी पैदा की। उन्होंने उत्साह में आकर कहा–"महा शिल्पी, बहुत समय से मेरी यही कामना रही है कि इस महा शिला को गणपति देव की मूर्ति के रूप में देखूं।" इन शब्दों के साथ अपने पास स्थित रेखा-चित्र को शिल्पी को दिखाते हुए पूछा–"तुम कौन हो? क्या करते हो?"

"मेरा पहला काम भर पेट भोजन करना और दूसरा मूर्तियाँ गढ़ना। मुझे बाल शिल्पाचार्य कहते हैं।" बाल शिल्पी ने अपना परिचय दिया।

इस पर अगत्स्य ने शिल्पी की ओर शंका भरी दृष्टि दौड़ा कर कहा–"इस महा शिला को महान शिल्प का रूप दे सकने वाले महा शिल्पी के इंतज़ार में मैं बैठा हुआ हूँ। लेकिन तुम तो बाल शिल्पी हो, पर यह शिला बड़ी भारी है। तुम नाटे हो, ऐसी हालत में मैं तुमसे यह कैसे पूछ सकता हूँ कि

दानव शिल्पी की अप्सरा पत्नी हेमा उसे छोड़ देवलोक में चली गई थी, इसलिए वह पागल बन कर भटक रहा था। इसलिए उन्हें बुला भेजना भी निरर्थक था।

इस कारण अगत्स्य की यह कामना एक समस्या बन कर रह गई। अन्न-जल त्याग कर वे रात-दिन उस शिला के सामने बैठे विघ्नेश्वर का ध्यान करने लगे–"गणपति देव, आप ने मेरी कामना की पूर्ति नहीं की। अब यह जिम्मेदारी आप ही की है।"

यों ध्यान करते अगत्स्य चारों तरफ़ अपनी नज़र दौड़ाते थे। संयोग से एक दिन शाम को तोंदवाला एक बालक उधर से आ निकला। उस के हाथ में छेनी

क्या तुम इस महा शिला को गणपति देव की प्रतिमा का रूप दे सकते हो?"

बाल शिल्पी मुस्कुरा कर बोला–"आप यह मत समझियेगा कि मैं भले ही बाल शिल्पी हूँ, मेरा शिल्प महान नहीं हो सकता, पर मेरी छेनी केलिए असंभव कार्य कोई नहीं है।" यों जवाब देकर बाल शिल्पी ने महर्षि को अपनी छेनी दिखाई। वह धक् धक् करते बज्र की भांति दमक रही थी।

इसके बाद अगत्स्य के देखते बाल शिल्पी ने छेनी को महा शिला की ओर फेंक दिया। छेनी की नोक के आघात से बिजली की जैसी कौंध और बादलों के गर्जन जैसी आवाज़ हुई। साथ ही शिला के मध्य भाग में एक छेद बन गया।

"यह तो नाभिस्थान है। मूर्ति-शिल्प के लिए नाभिस्थान अत्यंत मुख्य है। तिस पर लंबोदर की नाभि। इसका मतलब है कि लंबोदर के साथ प्रतिमा का प्रारंभ हो रहा है।" यों बाल शिल्पी कह रहा था तभी शिला के भीतर से 'लंबोदर लक्ष्मीकर' कहते मालव राग में मधुर गीत अगत्स्य को सुनाई दिया।

यह चुंबक शिला है। मूर्ति के गढ़ते वक़्त इसके अन्दर से प्रचंड बिजली निकलेगी। इसलिए इस प्रतिमा के समाप्त होने तक इसके आसपास किसी को पहुँचना नहीं चाहिए। उस वक़्त भयंकर ध्वनि भी सुनाई देगी। इसलिए नगर वासियों को घबराने की कोई जरूरत नहीं है। हे महर्षि, अब आप जाकर निश्चित सो सकते हैं। सवेरे तक मूर्ति बन कर तैयार हो जाएगी।" बाल शिल्पी ने जवाब दिया।

अगत्स्य को आश्चर्य हुआ। उनके चित्त को लगा कि वे निद्रा में डूबते जा रहे हैं। थोड़ी देर बाद संभल कर रेखा चित्र बाल शिल्पी के हाथ में देने को हुए, इस पर उसने कहा–"इसके पूर्व ही आपने दिखा दिया है न? एक बार देख लेना मेरे लिए पर्याप्त है। बार-बार चित्र को देखते शिल्प गढ़ने वाला महा शिल्पी मैं

नहीं हूँ। शिल्प को एक खेल मात्र मानकर गढ़ने वाला एक बाल शिल्पी हूँ। प्रतिमा के समाप्त होने पर चित्रकार से कह दीजिए, वह स्वयं आकर देख ले कि मेरी प्रतिमा रेखा चित्र के अनुरूप बन पड़ी है या नहीं। मैं नहीं जानता कि आपने रेखा-चित्र के लिए कितना पारिश्रमिक दिया है। पर देखना है कि मुझे कितना देने जा रहे हैं।" बाल शिल्पी ने कहा। उसकी बातों ने अगत्स्य के दिल मे हलचल मचा दी।

अगत्स्य के पास अपनी पत्नी केलिए सुरक्षित रखे धन को छोड़ कुछ बचा न था। बाकी सारा धन उन्होंने जनता में बांट दिया था। अगर वह धन शिल्पी को पारितोषिक के रूप में दे, तो लोपामुद्रा को क्या जवाब दे? यों सोचते अगत्स्य अपनी पत्नी के पास पहुँचे। आश्चर्य की बात थी कि लोपामुद्रा के चेहरे पर कोई अनोखा तेज दमक रहा था।

लोपामुद्रा अनिर्वचीय आनंद में आकर बोली—" महर्षिजी, आप मुझे क्षमा करें। मैं पहले से ही यह बात अच्छी तरह से जानती थी कि एक ऋषि पत्नी का आचरण, खान-पान और वेष भूषा भी मुनि-पत्नी के समान होना चाहिए। मुझे अब इस बात का आश्चर्य होता है कि मैंने आप को अच्छे अच्छे गहने, वस्त्र और धन लाने को क्यों प्रेरित किया है? मुझे लगता है कि किसी महान कार्य को संपन्न करने केलिए किसी अज्ञात शक्ति ने मेरे मुँह से ये बातें कहलवाई हैं। मुझे अब न गहने चाहिए, न कपड़े, और न धन। मेरे अंदर तात्कालिक रूप में जो अज्ञान प्रवेश कर गया था, वह अब दूर हो गया है।

लोपामुद्रा की बातों पर अगत्स्य महर्षि मन ही मन खुश हुए।

"शिल्पी तो आ गये हैं। समझ लो कि मूर्ति तैयार हो गई है। कहते हैं कि सवेरे तक मूर्ति बन जाएगी।" महर्षि ने कहा।

" क्या कहा? सवेरे तक वह महा शिला प्रतिमा का रूप धारण करेगी? वह शिल्पी

क्या कोई देवता है या मानव?" लोपामुद्रा ने विस्मय में आकर पूछा ।

"मानव ही है । तिस पर एक बालक ! मेरी समझ में नहीं आता है कि उसको पारितोषिक कितना देना है ? और कैसे देना है ?" अगत्स्य ने शंका प्रकट की ।

"आपने मेरे वास्ते जो धन जोड़ रखा है, क्या वह काफी न होगा ?" लोपामुद्रा ने पूछा ।

"सबेरा होने दो, कोई न कोई उपाय सोच लेंगे ।" अगत्स्य ने समझाया ।

"हाँ, मैं यह बात भूल ही गई थी । कल भादो शुक्ला चतुर्थी है । याने विनायक चौथ का दिन है । लगता है कि प्रतिमा की चिंता में पड़कर आप महीने और तिथियों की बात तक भूल गये हैं ।" लोपामुद्रा ने स्मरण दिलाया ।

"यह तो आश्चर्य की बात है । कल विनायक चतुर्थी है और उसी दिन उनकी मूर्ति तैयार हो रही है ।"

अगत्स्य को विस्मित देख लोपामुद्रा बोली–"वह शिल्पी बालक नहीं; मानव मात्र भी नहीं हो सकता ।"

अगत्स्य को अपनी पत्नी की बातों में कोई अद्भुत सत्य प्रतीत हुआ । रात बीतती जा रही थी, पर अगत्स्य को नींद नहीं आई । उनकी जिज्ञासा बढ़ती गई । वे इस ख्याल से बिस्तर से उठ कर चल पड़े कि देखें, महा शिला कैसे मूर्ति के रूप में गढ़ी जा रही है ।

महर्षि ने ने महा शिला के पास पहुँच कर जो दृश्य देखा, उससे उनका शरीर पुलकित हो उठा । वे उसी जगह लुढ़क पड़े । सैकड़ों छेनियाँ ख़ुद शिला को गढ़ रही हैं । रंग-बिरंगी विद्युत् कांतियाँ चारों तरफ़ फैल रही हैं । खन-खन की आवाज़ कान के पर्दों को फाड़ रही है । सारी छेनियाँ हाथी दांत की नोक जैसे वज्र की भांति चमक रही हैं । महर्षि की समझ में न आया कि वे जो कुछ देख रहे हैं, वह सपना है या सच है । वे इसी भ्रांति में अपने

होश खो बैठे और नींद ने उन्हें घेर लिया। नींद से जागने पर अगत्स्य ने देखा, सामने खड़े हो बाल शिल्पी उन्हें थपकी देकर जगा रहे हैं। पूरब में लालिमा छा रही है।

"महर्षि, यह क्या? आप यहाँ पर खोये हुए सपने देख रहे हैं? योग निद्रा प्रवीण आप सपनों की यह नींद कैसे सो रहे हैं? प्रतिमा बन कर तैयार है। रेखा-चित्र खींचने वालों से कहिए कि वे खुद आकर देख लें, कि उस चित्र के अनुरूप मूर्ति बन गई है या नहीं?" यों बाल शिल्पी अगत्स्य को समझा ही रहे थे, तभी एक थाल में मोदक, जल और फूल लेकर लोपामुद्रा आ पहुँची। अगत्स्य चकित हो स्फटिक जैसे दमकने वाली विघ्नेश्वर की प्रतिमा को निर्निमेष देख ही रहे थे, तभी बाल शिल्पी ने पूछा–"अब बताइये, मेरा पारितोषिक क्या देनेवाले हैं?"

महर्षि संकोच करते हुए बोले–"महा शिल्पी, आप की इस कला का मूल्य मैं क्या दे सकता हूँ? जो कुछ दूँ, वह पर्याप्त नहीं है। फिर भी मैंने आप के वास्ते जो धन सुरक्षित रखा है, वह अभी ले आता हूँ।"

बाल शिल्पी ने कहा–"पहले आप मुझे यह बताइये कि रेखाचित्र खींचने वाले चित्रकार को आपने कितना पारिश्रमिक दिया? शिल्प गढ़ना श्रम से पूर्ण है, लेकिन शिल्प की आकृति के केलिए आधार रेखाचित्र की रचना है। वह तो ऊहा से पूर्ण मेधा से भरी कला है।"

"बाल शिल्पाचार्य, रेखा चित्र खींचने वाले कलाकार को कुछ नहीं दिया है। उस चित्र की रचना मेरी पत्नी ने की है।" इन शब्दों के साथ लोपामुद्रा की ओर इशारा करने की मुद्रा में अगत्स्य ने उसकी ओर देखा। लोपामुद्रा उस समय किसी तन्मया-वस्था में डूबी हुई थी।

"महर्षि, आप यह क्या कह रहे हैं? अगर मैं होता तो उस रेखा चित्र के पारिश्रमिक के रूप में उतना धन देता जितना एक महा नगर के निर्माण के लिए

पर्याप्त हो सकता है। वह रेखा चित्र ऐसा महान है। आप यह सारा धन इसी देवी को दे दीजिए।" बाल शिल्पी ने सिफ़ारिश की।

इस पर अगत्स्य के मुंह से अचानक ये शब्द निकल पड़े–"मैंने दर असल लोपामुद्रा के वास्ते ही यह धन जोड़ कर रखा है।"

बाल शिल्पी चौंक कर बोले–"क्या कहा? यह तो स्त्री धन है? अच्छा हुआ कि आपने सच्ची बात बताई। अगर आप मुझे यह धन दे देते या मैं आप से ले लेता तो कैसा अनर्थ हो जाता! मैं उसमें से एक कौड़ी भी छूना नहीं चाहता।" यों जवाब देकर लोपामुद्रा की ओर मुखातिब हो बोले–"माताजी, आप अपने हाथों से मोदक का एक टुकड़ा मेरे मुंह में डाल दीजियेगा। वही मेरे लिए सच्चा पारितोषिक होगा। ब्रह्मा ने कभी शिल्पियों के माथे पर अपना लेख लिख दिया है कि गढ़ने केलिए पेट भरना ही सच्ची मजूरी है।"

ये शब्द सुनते ही लोपामुद्रा ने मोदकों से भरी थाली बाल शिल्पी के सामने रख दी। साष्टांग दण्डवत करके शिल्पी के चरण पकड़ कर बोली–"विघ्नेश्वर। आपके अनुग्रह से हमारे जन्म तर गये हैं।" लोपामुद्रा यों विघ्नेश्वर की स्तुति कर ही रही थी कि इस बीच बाल शिल्पी अदृश्य हो गये।

इसके बाद अगत्स्य पर छाई हुई माया अंतर्धान हो गई। वे विघ्नेश्वर की प्रतिमा के आगे प्रणाम करके बोले–"विघ्नेश्वर, मैं यह सोच कर आज तक अभिमान में डूबा रहा कि मैं अपूर्व योग बल रखता हूं। पर मैं आप के सम्मुख एक दम अज्ञानी बना रहा। महान से महान व्यक्ति भी आप की माया से अतीत नहीं हो सकता।" यों प्रणाम करके महर्षि अपने कान पकड़ कर उठा-बैठी करने लगे। उसी वक़्त शिल्प के भीतर की सारी प्रतिमाएँ 'वातापि गणपति भजे' नामक कीर्तन हंसध्वनि राग में गाते प्रतीत हुईं।

गंधर्व राजकुमारी

[७]

हसन हताश होकर घर लौटा, मगर इस बीच फिर उस के भीतर कोई आशा जगी। उसे राजकुमारियों की याद आई। उसी वक़्त अपनी माँ से बिदा ली, ऊंट को बुला कर उस पर सवार हो अपनी दीदियों के पास चल पड़ा। हसन को जल्दी वापस लौटे देख उस की दीदियाँ खुशी के मारे फूली न समाईं। हसन ने उन्हें सारी कहानी सुनाई और वह शोक में डूब गया। दीदियों ने उसे कई तरह से समझाया।

हसन थोड़ी तसल्ली पाकर बोला–"मेरी प्यारी दीदियो, आप लोग मुझे वाक्–वाक् द्वीपों में पहुँचने का रास्ता बताइये। मेरी बीबी कह गई है कि वहाँ पर पूछ-ताछ करने पर उस का पता लग जाएगा।"

सातों दीदियों ने एक-दूसरे के चेहरे देख अपने सर झुका लिये। आखिर बोलीं–"हसन, हाथ उठाकर स्वर्ग को छू लेना भी तुम्हारे लिए मुमकिन हो सकता है, लेकिन वाक्-वाक् द्वीपों तक पहुँचना नामुमकिन है।"

हसन की सारी आशाएँ धूल में मिल गईं। वह फिर से दुख में डूब गया।

आखिर गश खाकर गिर पड़ा।

"हसन को पालने वाली आखिरी व छोटी राजकुमारी उसे सांत्वना देकर बोली–"भैया, अगर तुम्हारी क़िस्मत में अपनी बीबी-बच्चों के साथ मिलने को बदा है तो तुम्हारे सामने कोई न कोई रास्ता खुल जाएगा। हम अपनी ओर से कोई कसर उठा न रखेंगी। तुम फ़िक्र मत करो।"

राजकुमारियों के अब्दुल कद्दूस नामक एक मामा है जो साल में एक बार उन्हें देखने जरूर आता है। जरूरत पड़ने पर यदि उसे बुलवा लेना है तो एक तरह का

गुग्गुल अंगारों में डालना पड़ता है। वह गुग्गुल बड़ी राजकुमारी के पास है। थोड़ा गुग्गुल लेकर अंगारों पर डालते ही बड़ा वात्याचक्र उठा। उस के थमते ही एक सफ़ेद हाथी पर सवार हो, अब्दुल कद्दूस सीधे चला आया।

"मेरे यहाँ आये ठीक एक साल गुजर गया है। कल रवाना होकर मैं यहाँ पहुँचना ही चाहता था। इस बीच तुम लोगों ने मुझे बुला भेजा। कोई खास बात होगी। क्या है वह ?" कद्दूस ने अपनी भानजियों से पूछा।

"वैसे कोई खास खबर नहीं है। आप से हमारे लिए एक मदद की जरूरत है।" सभी राजकुमारियों ने एक साथ कहा।

"अच्छी बात है। मैंने वचन दे दिया है, पूछ लो।" कद्दूस ने कहा।

राजकुमारियों ने कद्दूस को हसन की सारी कहानी सुनाई और बिनती की–"मामाजी, हमारे छोटे भाई हसन को वाक्-वाक् द्वीपों में जाने का कोई उपाय बताइये।"

कद्दूस मुँह पर उंगली रखकर देर तक सोचता रहा, फिर बोला–"यह काम मुमकिन नहीं है। तुम्हारे भाई ने असंभव कार्य का संकल्प किया है। उस का वाक्-वाक् दीपों में पहुँच जाना असंभव है।"

"यह बात आप उस को समझाइये। आप अपनी सलाह भी दीजिए।" राजकुमारियों ने कहा।

इस पर अब्दुल कद्दूस ने हसन को समझाया–"बेटा, तुम्हें पुच्छल तारे या संचार करने वाले ग्रह भी वाक्-वाक् द्वीपों तक पहुँचा नहीं सकते। उन द्वीपों में गंधर्व चक्रवर्ती का निवास है। उन द्वीपों की रक्षा सैनिक कन्याओं के दल किया करते हैं। तुम सप्त समुद्र और सप्त पर्वत पार करने पर ही वहाँ तक पहुँच सकते हो। इसलिए तुम अपना संकल्प त्याग कर अपनी दीदियों के साथ आराम से यहीं पर अपने दिन बिताओ। तुम नाहक़ क्यों मुसीबतें मोल लेना चाहते हो ?"

सूरज भान की बातें पूरी भी हो न पाई थीं, लक्ष्मीचन्द का चेहरा तमतमा उठा, उठ खड़े होकर बोला–"अगर मुझे पहले ही यह बात मालूम हो जाती, तो इस घर में क़दम तक न रखता। उस पापी की बेटी को देखने के अपराध में मुझे कोई न कोई प्रायश्चित्त करना होगा।" ये शब्द कहते लक्ष्मीचन्द घर से बाहर निकला।

उस दृश्य को देख सूरजभान एक दम चकित रह गया। हेमा का चेहरा सफ़ेद पड़ गया। उसकी आँखों में आसू भर आये। सूरजभान की समझ में न आया कि क्या बोले। वह अपना सर झुकाये बाहर चला आया और सीधे लक्ष्मीचन्द के घर पहुँचा। लक्ष्मीचन्द का क्रोध अभी उतरा न था। सूरजभान थोड़ी देर तक चुप बैठा रहा, फिर पूछा–"रामचार्य बड़े ही दयालू वैद्य के रूप में लोक प्रिय हैं। उन पर तुम नाराज़ क्यों हो?"

"इसका कारण बता देता हूँ, मगर तुम आइंदा कभी उस नीच व्यक्ति का नाम मेरे सामने न लो।" लक्ष्मीचन्द ने कहना शुरू किया–"लालचन्द नामक मेरे एक दोस्त था। मैं ने जिस दिन शहर में नौकरी में प्रवेश किया, उसी दिन उस की शादी हुई। इस वजह से मैं अपने बचपन के दोस्त लालचन्द की शादी में शामिल न हो सका। लालचन्द पार्वतीपुर में नौकरी करता था। नौकरी में दाखिल होने के तीन महीने बाद मुझे लगातार दो दिन की छुट्टी मिली। मैं अपने मित्र को देखने पार्वतीपुर केलिए चल पड़ा। वहाँ पर पहुँचते-पहुँचते अंधेरा फैल गया। फिर भी मुझे लालचन्द के घर का पता लगाने में कोई तक़लीफ़ नहीं हुई।
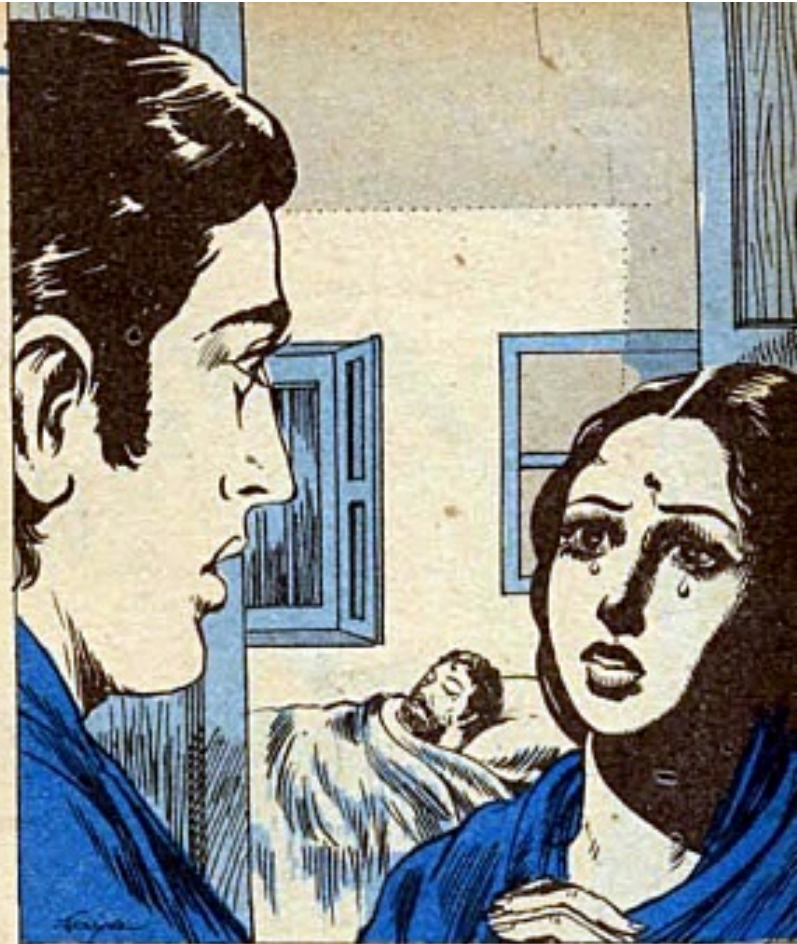
मैं ने दर्वाजे पर दस्तक दिया। लालचन्द की पत्नी गिरिजा ने आकर किवाड खोला, मुझे लगा कि गिरिजा मुसीबत में है।

"मेरा नाम लक्ष्मीचन्द है। मैं लालचन्द का दोस्त हूँ।" मैं ने कहा।

मेरी बात सुनते ही पार्वती अपने आंचल से आँसू पोंछते हुए बोली–"भैया,

बैठा रहा। मुझे मरीज़ के पास देख पार्वती के भीतर हिम्मत आ गई और वह थकावट के मारे सो गई। आधी रात के क़रीब लालचन्द की हालत बिगड़ती गई।

मैंने घबरा कर पार्वती को जगाया और कहा–"मैं अभी अभी रामाचार्य को बुला लाता हूँ। तुम लालचन्द के पास बैठी रहो।"

पार्वती ने रामाचार्य के मकान का हुलिया बतला दिया। मैंने नीम के पेड़ के सामने वाले रामाचार्य के घर को पहचान लिया, जोर-शोर से दर्वाजे पर दस्तक दिया, तब जाकर खिड़की के किवाड़ खुल गये।

"आप ही रामाचार्य हैं? मेरे दोस्त लालचन्द की हालत..." यों मैं झमझा ही रहा था, झट से मुझे जवाब मिला–"रामाचार्य मेरे पिताजी हैं। आधी रात के वक़्त आकर हम लोगों को क्यों तंग करते हो?" यों कहते खिड़की के पीछे खड़ा हुआ व्यक्ति मुझ पर नाराज़ हो गया।

"मरीज़ की हालत बड़ी ख़राब है। आप अपने पिताजी को बताइये तो।" मैंने कहा। उस वक़्त वह व्यक्ति सर घुमाकर बोला–"पिताजी, किसी लालचन्द की तबीयत ख़राब है। आप जाना चाहेंगे?"

"ऐरे-ग़ैरे सभी लोग आधी रात के वक़्त हमारी नींद ख़राब कर देते हैं। तुम जाकर सो जाओ, अगर मरीज़ ज़िंदा रहा

आप वक़्त पर आ गये। आप के दोस्त की तबीयत बिलकुल ख़राब है।"

लालचन्द खाट पर बेहोश पड़ा हुआ था। "तीन दिन से इन्हें सख़्त बुख़ार है। मुझे बड़ा डर लग रहा है।" गिरिजा बोली।

मैंने लालचन्द के माथे पर हाथ रखकर देखा, तब कहा–"बहन, तुम डरो मत। मैं अभी वैद्य को बुला लाता हूँ।"

"इस गाँव में रामाचार्य नामक एक ही वैद्य हैं। दो घंटे पहले जांच करके दवा दे गये हैं। कहते थे कि वे पड़ोसी गाँव में जा रहे हैं। न मालूम उनके लौटने में कितनी देर होगी।" गिरिजा ने कहा। मैं बेहोश लालचन्द की परिचर्या करते

गुफा के अंदर चला गया। गुफा के बाहर घंटे भर हसन इंतजार करता रहा, तब एक वृद्ध भद्र पुरुष गुफा से बाहर आये। वे काले रंग के थे और उन का पहनावा भी काले रंग का था। पर कमर तक लटकने वाली उनकी दाढ़ी सफेद रंग की थी। वे कोई और न थे, साक्षात सुलेमान के पुत्र अली थे। हसन ने विनय पूर्वक उनके सामने घुटने टेक दिये। तब अब्दुल हसन से प्राप्त चिट्ठी उनके हाथ में दी। अली उस चिट्ठी को लेकर चुपचाप गुफा के अंदर चले गये।

वक़्त बीतता जा रहा था, हसन थकावट के मारे निराश हो गया। उस वक़्त वह पुरुष सफेद वस्त्र धारण कर गुफा से बाहर आये और हसन को अंदर आने का इशारा किया। इसके बाद हसन को अपने साथ वृद्ध पुरुष गुफा के भीतर के एक चौपाल में ले गये। उस चौपाल में सब जगह हीरे जड़े थे। उसके चारों कोनों पर कालीनों पर चार ज्ञानी पुरुष बैठे हुए थे। उन की बगल में कई पोथियां एक दूसरे पर करीने से सजी हुई थीं। चौपाल के बीच वृद्ध के सात शिष्य बैठे थे। वे लोग कुछ लिख-पढ़ रहे थे।

अली के प्रवेश करते ही सब लोग उठ खड़े हुए। जब वे चौपाल के बीच बैठ गये, तब सब लोग उन्हें घेर कर बैठ गये। इस के बाद हसन ने उन्हें अपनी कहानी सुनाई। उस पर सब ने चर्चा की और अंत में वृद्ध को सलाह दी कि हसन की मदद करना वाजिब ही है।

उनकी सलाह पाकर अली बोले–"तुम लोगों का कहना सही है, लेकिन वाक्-वाक् द्वीपों तक पहुँचना आसान काम नहीं है। तिस पर वहाँ से वापस लौटना तो असंभव ही है। सैनिक कन्याओं के द्वारा इसे जिन खतरों का सामना करना पड़ेगा, उनकी बाबत कुछ कहने की जरूरत ही नहीं है। मेरी समझ में नहीं आता कि यह युवक अपनी बीबी से कैसे मुलाक़ात कर सकता है?"

(और है।)

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जुलाई १९८२ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

M. Natarajan

★

Prabhakar Mahadik

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ मई १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: **चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६**

मार्च के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : **एक दूजे पर चढ़ी हँडियाँ!**

द्वितीय फोटो : **एक एक कर उतर सीढ़ियाँ!!**

प्रेषिका : **कु. सुजाता शर्मा,** सेक्टर २/२८ सादिक नगर, नई दिल्ली

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188, Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

सात समंदर पार मेरी नाव चली
लाल परी के गांव मेरी नाव चली
भर भर लाऊं जॅम्स नाव में अपनी झटपट
लेना हो जो जॅम्स किनारे से हटना मत
GEMS
कितना सुन्दर सपना...झट ले लो जॅम अपना!
कॅडबरिज़
चॉकलेट्स
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे; मीठे मीठे सपनों जैसे!
OBM/8341
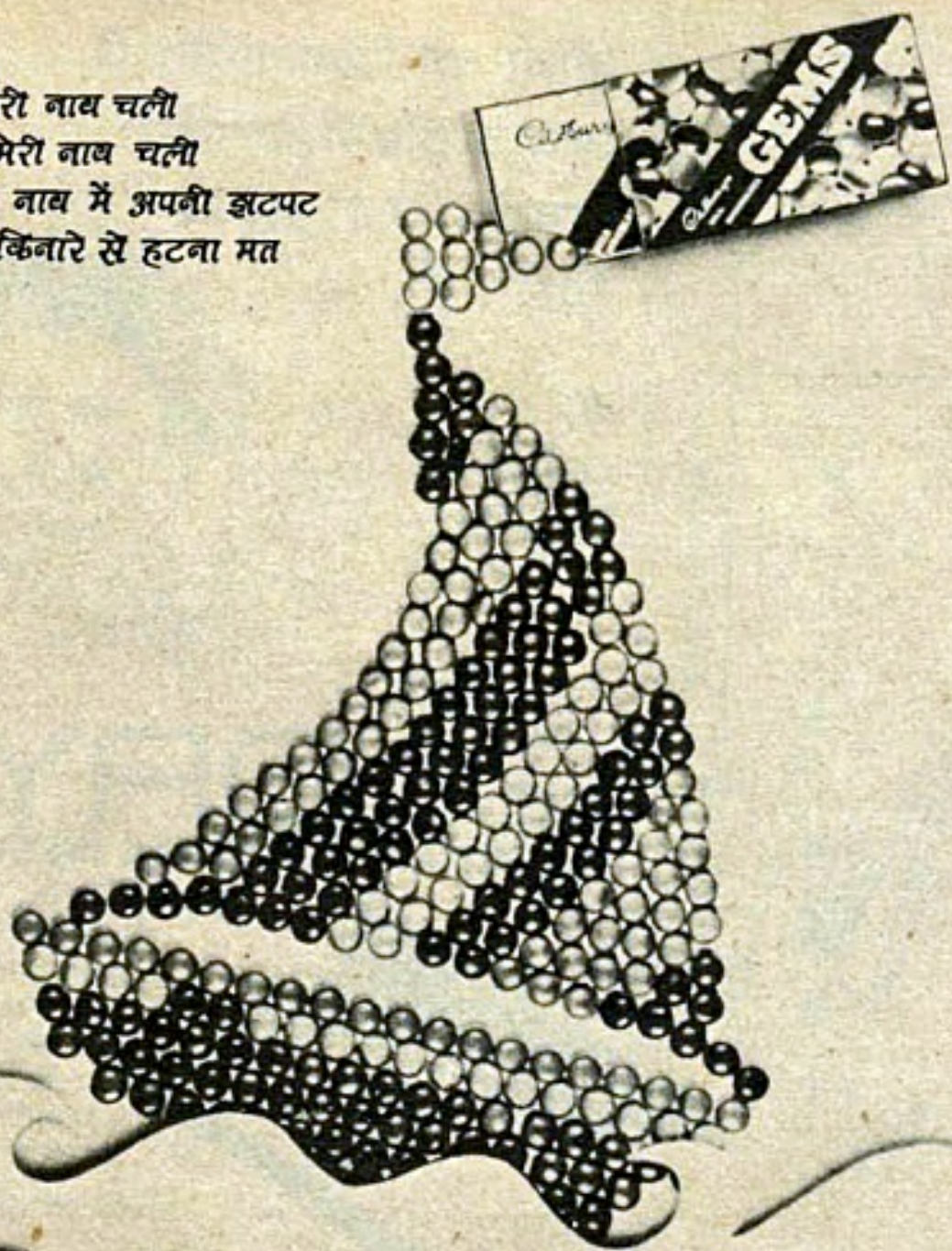
गीता को रेखागणित में
अचूक ड्रॉइंग के लिए
सबसे ज्यादा नम्बर
मिलते हैं
वह
प्रयोग
करती
है
OMEGA
GLORY
MATHEMATICAL DRAWING INSTRUMENTS
विद्यार्थियों के लिए एक उत्कृष्ट टिकाऊ
कम्पास बॉक्स :
★ उत्तम प्रकार के पारदर्शक प्लास्टिक
के बने रूलर, डिग्री प्रोट्रैक्टर और
सेटस्क्वेयर ★ बढ़िया धातु के बने और
सरलतापूर्वक हेर-फेर किये
जा सकने वाले कम्पास और डिवाइडर
★ उच्च श्रेणी की पेंसिल और इरेज़र.
ओमेगा-गुणवत्ता में अंतिम शब्द.
Winners Of
TOP PLEXCONCIL
EXPORT AWARD
OMEGA
निर्माता :
अलाइड इंस्ट्रुमेंटस् प्रा. लि.
३०, सी-डी, गवर्नमेंट इंडस्ट्रियल एस्टेट, कांदिवली, बम्बई-४०० ०६७
फोन : ६९२४२४, ६८४०६८ • टेलेक्स : ०११-३०६९ AIPL. तार : ARTCORNER.
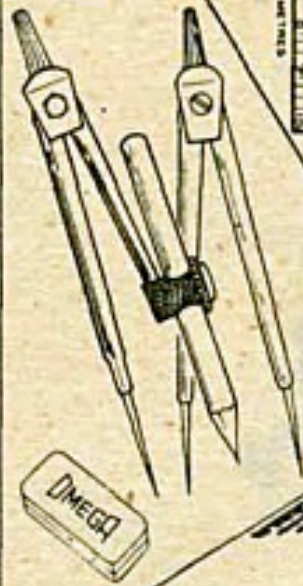
Life could become unbearable
when torn between age-old
superstitions and the demands
of the pseudo modern
life-style.
श्रीमान श्रीमती
बी. नागी रेड्डी
प्रस्तुत करते हैं,
एक नयी महान
फिल्म
Director :VIJAYA REDDY
Story :K. S. RAO
Dialogue :RAJ BALDEV RAJ
Lyrics :MAJROOH SULTANPURI
Music :RAJESH ROSHAN
Camera :
P. L. RAI
Art :
S. KRISHNA RAO
Editing :
K. BALU
Associate Director :
VIJAYAKUMAR RAICHURA
Stills :
R. NAGARAJA RAO
Production Controller :
M. VEERA RAGHAVULU
HMV
Frame to Frame a Family Film
विजय प्रॉडक्शन्स - चित्र

PARLE
POPPINS
हरा
रूपहला
नारंगी
रूपहला
लाल
रूपहला
पीला
शकल की नकल नहीं चलेगी!
असली पॉपिन्स
अब रुपहली धारियोंवाले रैपर में मिलेंगी!
बच्चो, बिलकुल ताज़ा खबर सुनो! अब नक्काल तुम्हें धोखा नहीं दे पायेंगे. तुम तो बस इतना करो, कि पॉपिन्स के रंगबिरंगे पैक पर रुपहली धारियां देख कर तसल्ली कर लो. बस, फिर पॉपिन्स के रसीले मज़ेदार, फलों-से स्वाद का मज़ा लेते जाओ.
पारले
पॉपिन्स
अब नक्कालो की चालें नहीं चलेंगी.